अर्ध शताधिक ग्रंथ कर्ता ,इन्दू)हिन्दू (धर्म प्रदाता,
संचलनात्मक रचयिता ,त्रैत सिद्धान्त आदि कर्ता

श्री श्री श्री आचार्य प्रबोधानन्द योगिश्वर जी

(दि जजमेंट ऑफ गॉड)

Translation by
K.Ramani B.Com
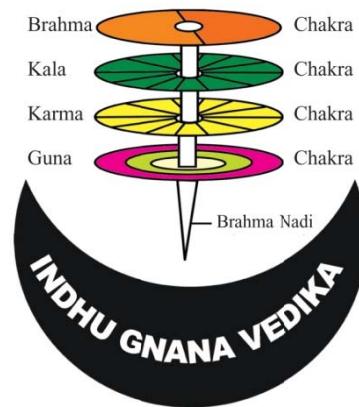
Published by
Indu Gnana Vedika
(Regd.No.168/2004)

IMP Note : To know the true and complete meaning of this Grandha (book) it must be read in Telugu Language.

फैसला (दि जजमेंट ऑफ गॉड)

फैसला या निर्णय का अर्थ होता है निश्चित करना। और स्पष्ट रुप से कहा जाय तो किसी भी विषय में सही और गलत की गणना कर, सही और गलत का विवरण देना, तथा सही के लिए अक्ष एवं गलत के लिए शिक्ष(सजा) निश्चित कर बताना, फैसला कहा जाता है। यहाँ पर सजा के स्थान पर शिक्ष शब्द का प्रयोग किया जा रहा है। यह शब्द बेहद अर्थपूर्ण शब्द है, तथा भाषा के अनुसार देखा जाय तो तेलुगु में सजा को शिक्ष कहते हैं। अब शिक्ष शब्द का प्रयोग करते हुए, उदाहरण हेतु न्यायालय(कोर्ट) के बारें में चर्चा करेंगे। न्यायालय(कोर्ट) के बारें में सब जानते ही हैं। कोर्ट में एक जज रहता है, जज के सामने मुजरिम खड़ा रहता है। मुजरिम द्वारा किए गए अच्छे-बुरे कार्योंको मुजरिम द्वारा या वकील द्वारा विवरण लिया जाता है। कार्रवाई पूरी होने के बाद न्यायधीश कानून के अनुसार उसमें से गलत और सही को ग्रहण कर फैसला देते है। बाहरी प्रत्यक्ष सारे न्यायालय इंसानों द्वारा निर्मित किए गए होते हैं, इन्हें केवल उदाहरण हेतु बताया जा रहा है

वास्तव में हम सब लोगों के लिए एक अप्रत्यक्ष न्यायलय भी होता है। यह बहुत बड़ा न्यायलय है। उस न्यायलय में बिना किसी कुल, मत(धर्म) का भेद किए सभी मतों(धर्मों) के लोगों पर कार्रवाई होती है। विशेष बात यह है कि यह न्यायालय न ही दिखलाई पड़ता है, और न ही निर्णय लेनेवाला निर्णायक दिखलाई पड़ता है। इस अप्रत्यक्ष न्यायस्थान में, अप्रत्यक्ष ईश्वर ही न्यायधीश या निर्णायक होता है। कोई भी फैसला ईश्वर द्वारा ही होता है। इस वजह इसे ईश्वर का फैसला या निर्णय कह सकते हैं। कई लोग इसे "दि जजमेंट ऑफ गॉड" कहते हैं। अप्रत्यक्ष न्यायस्थान में कार्रवाई कैसे होती होगी, फैसले कैसे लिए जाते होंगे कोई नहीं जानता। फैसले में कौन सी शिक्ष(सजा) दी जायेगी कोई नही जानता। कार्रवाई हो, या फैसला हो, शिक्ष(सजा) हो, या अक्ष(सजा न होना)हो कोई नहीं जान सकता। परन्तु फैसले में मिली शिक्ष(सजा) को

भोगना अनिवार्य होता है। प्रत्यक्ष कोर्ट मे, कार्रवाई हो, फैसला हो, और शिक्ष(सजा) की जानकारी अपराधी को पहले से ही रहती है। जैसे कि किसी अपराधी को फाँसी की सजा हो या कारावास की शिक्ष(सजा) निश्चित की जाती है, तो उस अपराधी को उसकी जानकारी पहले ही हो जाती है। किन्तु अप्रत्यक्ष अर्थात् भीतर कोर्ट में निश्चित की गई शिक्ष(सजा) अमल में आने से क्षण भर पूर्व भी मालूम नहीं पड़ता है।

यहाँ कुछ लोगों को एक प्रश्न आ सकता है, जो इस प्रकार से है! हमलोगों ने कोर्ट के बारें में, जज के बारें में, शिक्ष(सजा) के बारें में सुना था, परन्तु अक्ष के बारें में कभी नहीं सुना, तथा यह कैसे अमल में आएगा कोई भी नहीं जानता। वास्तव में यह है क्या? इस प्रकार के प्रश्न पुछ सकते हैं। इसका उत्तर मेरा अधिकारी(आत्मा), मेरे द्वारा इस प्रकार से सूचित कर रहा है। अतएव हम(मेरी आत्मा + मैं) दोनों का कहना यह हैं कि "क्ष" अक्षर नाश को सूचित करता है। शिक्ष(सजा) शब्द नाश से संबंधित अर्थ है। शारीरिक हो, या मानसिक हो, उत्पन्न नाश को शिक्ष(सजा) कहते हैं। शारीरिक हो, या मानसिक हो दर्दयुक्त होती है। इस प्रकार से उत्पन्न दर्द को शिक्ष(सजा) कहा जाता है। बाहरी प्रत्यक्ष कोर्ट को न्यायालय, और जज को न्यायधीश कहते हैं। यह उदाहरण मात्र है। वास्तविक न्यायालय शरीर के अन्दर स्थित है। और न्यायधीश के बारें में कोई नहीं जानता। उन्हें किसी ने देखा नहीं। दंड अधिकारी के रुप में कोई एक वास करता है, निरुपण करने हेतु भगवद् गीता ग्रंथ में विभूति योग अध्याय 29 वाँ श्लोक *"यम ; संयमतामहम्"* का अर्थ है **"शासन करनेवालों में यम हूँ मैं।"** यम से तात्पर्य, यम न ही यमलोक में रहता है, न ही कोई विशेष व्यक्ति है। पुराणों की कथाओं से हटकर, आध्यात्मिक विषयों के अनुसार देखा जाय तो, हमारे शरीर में अप्रत्यक्ष रुप से रहनेवाला ही वास्तव में यम है, समझना चाहिए। किस गलती की कौन सी शिक्ष(सजा) होगी उसे पहले ही ईश्वर अर्थात् यम ने सृष्टि के आदि में ही निर्णीत कर

रखा है। गलतियों की शिक्ष(सजा) पहले ही निर्णय किया जा चुका है। उसी निर्णय के अनुसार ही मनुष्य जो गलतियाँ करें, ग्रहणकर उसी के अनुसार शिक्ष(सजा) अमल करवानेवाला भी दूसरा कोई है। सृष्टि से पूर्व ही ईश्वर का निर्णय हो चुका है। **सृष्टि के बाद परमात्मा का न ही नाम है, न ही रुप है, न ही कोई कार्य न करता है, कोई भी न भूलें।** आध्यात्मिक नियम के अनुसार(परमात्माधर्म के अनुसार) परमात्मा नाम, रुप, क्रिया रहित है, स्मरण रखना चाहिए। ईश्वर सब से परे है। पूरे विश्व का सृजन करनेवाला, पालन करनेवाला, नाश करनेवाला परमात्मा, सारी व्यवस्था परमात्मा ने सृष्टि से पूर्व ही कर रखी। अत; परमात्मा सृष्टि, स्थिीति तथा लयों के कारणभूत कह सकते हैं। इस विषय को सब समझें , प्रपंच की भाषा अंगरेजी में परमात्मा को GOD(गॉड) कहा गया। यह शब्द तीन अक्षरों के सम्मेलन से बना है। ईश्वर सृष्टि के सृजनहार है इसलिए उन्हें अंगरेजी भाषा में सृजनहार Generator(जनरेटर), पालनहार Operator(ऑपरेटर) तथा लयकर्ता Destroyer(डिस्टॉयर) कह सकते हैं। ईश्वर या परमात्मा जनरेटर, ऑपरेटर, डिस्टॉयर तीनों है इसलिए उनके प्रतीक के रुप में Genarator शब्द से पहला अक्षर "G" को लिया गया, Operator शब्द से पहला अक्षर "O" को लिया गया, Destroyer शब्द से पहला अक्षर "D" अक्षर को लिया गया, तीनों अक्षरों को मिला कर "GOD" कहा गया। गॉड (GOD) तीन अक्षरों का सम्मेलन अर्थात् सृष्टि, स्थिीति, लय के कर्ता परमात्मा के प्रतीक के रुप में रखा गया। वास्तव में यह कोई नाम नहीं है। क्योंकि परमात्मा का कोई नाम नहीं होता, गॉड, परमात्मा, ईश्वर, पुरुषोत्तम, अंर्तयामी, सर्वधारी, सृष्टिकर्ता, सृजनहार, परमेश्वर, आदिमध्यरहित, विश्वव्यापी, ये सब उनकी उत्कृष्टता से संबंधित उपाधियाँ हैं ऐसे ही अनेकों नामों से उन्हें पुकारा जाता है।

सब के कल्पना से परे, तथा सब के लिए अनजान हैं, परमात्मा। सबके कारण और कर्ता परमात्मा को अंगरेजी में GOD(गॉड), तथा हिन्दी

में सब लोगों का परिचित शब्द परमात्मा, ईश्वर, परमेश्वर उपाधियों से संबोधित करते हुए हम आगे बातें करेंगें। हमनें पहले भी बताया, मूलपुरुष परमात्मा नाम, रुप, क्रियारहित है। मनुष्य, वर्तमान में जो गलतियाँ करता है उसे पहचानकर उन गलतियों का परमात्मा द्वारा निर्णीत नियम या धर्म के अनुसार शिक्ष(सजा) को अमल करनेवाला अन्य कोई है, बताए थे न! वही दूसरा पुरुष मनुष्य द्वारा की गयी गलतियों को पापों के रुप में पहचानकर उसका लेखा-जोखा कर, उन पापों को परिहार के रुप में शिक्ष(सजा) को अनेक रुपों में अमल करवाता है। तथा मनुष्य द्वारा किये गए अच्छे कार्यों को पुण्यों के रुप में पहचानकर लेखा-जोखा कर, उन पुण्यों को परिहार के रुप में अनेक प्रकार के अक्षों को अमल करवाता है। शिक्ष(सजा) हो, या अक्ष हो निर्णायक प्रथम पुरुष परमात्मा(यम) है, तथा उन सबको अमल करवानेवाला दूसरा पुरुष चित्रगुप्त होता है। यम, तथा चित्रगुप्त के बारें में कई लोगों ने सुना होगा, उन लोगों का सोचना हैं यमलोक में यमराज, तथा चित्रगुप्त रहते हैं। ऐसी बातें पुराण कथाओं में कहा गया।

यहाँ मुख्य रुप से जाननेवाली बात यह है कि तेलुगू में देवुडु शब्द, हिन्दी में परमात्मा अर्थात् आत्मा से परे, तथा अंगरेजी में GOD का अर्थ सृष्टि, स्थिीति, लयों के कर्ता, दंड अधिकारी हैं इसलिए उन्हे "यम" कहा गया। "यम" शब्द परमात्मा पर ही लागू होता है। कोई भी मनुष्य ऊँचे पद पर रहे, या देश का राजा हो , या मंत्री हो, या किसी भी ओहदे पर रहे वह व्यक्ति तीसरा पुरुष जीवात्मा ही है। पहला पुरुष हर एक का कारण परमात्मा, दूसरा पुरुष सब अमल करवानेवाला चित्रगुप्त के रुप में हैं। और स्पष्ट रुप से कहा जाय तो प्रथम मूलपुरुष यमराज है, शिक्ष(सजाओं) को, अक्षों को अमल करवानेवाला दूसरा पुरुष अर्थात् चित्रगुप्त कह सकते हैं। और तीसरा पुरुष मनुष्य के शरीर के अन्दर में रहकर शिक्षों(सजाओं) को नरक के रुप में, अक्षों को स्वर्ग के रुप में जीवात्मा अनुभव करता है, कह सकते हैं।

विश्व में पुरुष तत्वयुक्त मात्र तीन ही हैं। उन तीनों में अंतिम पुरुष या तीसरा पुरुष जीवात्मा के रुप में है। दूसरा पुरुष रहस्य गुप्तात्मा के रुप में विराजमान है। पहला पुरुष, दूसरे पुरुष से तथा तीसरे पुरुष से उत्तम पुरुषोत्तम है। इसलिए आदि पुरुष परमात्मा को पुरुषोत्तम भी कहा गया। अक्ष का तात्पर्य बताने से पहले पुरुषों के बारें में बताने की आवश्यकता थी। तीनों पुरुषों के बारें में पृथक-पृथक से बताते हुए हमने "**त्रैत सिद्धान्त**" का प्रतिपादन किया था। त्रैत सिद्धान्त का ज्ञान सभी ज्ञानों में अतिउत्तम ज्ञान है गर्वपूर्वक कह रहा हूँ। त्रैत सिद्धान्त के बारें में इन्दूत्व के मूल ग्रंथ भगवद् गीता में, पुरुषोत्तम प्राप्ति योग 16, 17, 18 श्लोक में इस प्रकार से दिया गया है।

16 वाँ श्लोक द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षर च्शाक्षर एव च ।
क्षर; सर्वाणि भूतानि कुटस्थो ऽक्षर उच्चयते ।।

17 वाँ श्लोक उत्तम; पुरुषस्त्वन्य; परमात्मेत्युदाहृत; ।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ।।

18 वाँ श्लोक यस्मात्क्षरमतीताऽहमक्षरादपि चोत्तम; ।
अतो ऽस्मि लोके वेदे च प्रथित; पुरुषोत्तम; ।।

16 वाँ भावार्थ :- संसार में दो प्रकार के पुरुष होते हैं। जिन्हें हम क्षर और अक्षर पुरुष कहते हैं। क्षर पुरुष सजीव शरीर के अन्दर वास करता है। उनके साथ अक्षर पुरुष भी रहता है।

17 वाँ भावार्थ :- उत्तम-अतिशय उत्कृष्ट पुरुष तो अन्य ही है। अर्थात् इन दोनों से विलक्षण है, जो कि परमात्मा नाम से कहा गया है। तीनों लोकों में प्रविष्ट होकर उन्हें वहन करनेवाला उत्तम पुरुष को ईश्वर कहा गया।

18 वाँ भावार्थ :- क्योंकि क्षर से अतीत हूँ, अक्षर से अति उत्तम होने के कारण, मुझे लोक में वेद या गुण स्वरुप प्रकृति पुरुषोत्तम नाम से ही मेरा वर्णन करते हैं।

इन तीनों श्लोकों में क्षर, अक्षर, एवं पुरुषोत्तम तीन पुरुषों के बारें में वर्णन किया गया है। पूरे विश्व में ये तीन पुरुष ही हैं। इनके अलावा अन्य कोई पुरुष ही नहीं है। तीनों पुरुषों में से क्षर अर्थात् नाशवान्। अक्षर अर्थात् जो नष्ट नहीं होता है। जो क्षर और अक्षर से बड़ा तथा उत्तम है, जो जन्म और मृत्यु से रहित है, उन्हे पुरुषोत्तम कहा गया। जिन्हे हम परमात्मा, ईश्वर कहते हैं पूरे विश्व में व्याप्त होते हुए भी सब के शरीरों के अन्दर भी रहता है। सब जानते हैं कि परमात्मा सब जगह मौजुद है। किन्तु मनुष्य यह नहीं जानता कि स्वयं एक जीव है। मध्य पुरुष अक्षर के बारें में भी सब अनजान हैं। अक्षर पुरुष, मनुष्य के कर्मों का गणना करनेवाला गणक, तथा उन्हें पुन; अमल में लानेवाला भी वही है, किन्तु उन्हे कोई नहीं जानता है। हर मनुष्य के शरीर में जीव के साथ वास करते हुए, हर हरकत आप ही करवाते हुए शरीर के अन्दर अव्यवों को, तथा बाह्य अव्यवों का संचालन कर जीव से कर्मों का अनुभव करवाने वाला भी दूसरा पुरुष अक्षर ही है। अबतक अक्षर के बारें में थोड़ी बहुत जानकारी हो चुकी। इसलिए अब अक्ष का अर्थ भी आसानी से समझा जा सकता है।

तुम्हारे शरीर में तुम, शिक्ष(सजा) हो, या अक्ष को अनुभव करनेवाले जीव हो तुम। तेरे शरीर को हरकत करवाकर रुप, ध्वनि, स्पर्श, रुचि, गंध, इन्द्रियाँज्ञान देकर, तेरे से सुखों और दुखों का अनुभव करवानेवाला अक्षर, तेरे शरीर में तेरे ही बगल में स्थित है, किन्तु तुम उनसे अनजान हो। केवल तुम ही नहीं बल्कि इस प्रपंच में सब लोग इस बात से अनजान रह गए हैं। वर्तमानकाल में दूसरे पुरुष की कोई पहचान ही नहीं है।

धरती पर 95% लोग भूल चुके हैं कि वें खुद एक जीव हैं। 5% लोग नास्तिक बन गए, और उनका कहना है कि परमात्मा ही नहीं है। अन्य मतों(धर्मों) के नाम से जाने जानेवाले लोग भी पुरुष ज्ञान की जानकारी से अनजान हैं। स्वयं के शरीर में ही स्वयं को, स्वयं के शरीर का अधिकारी वास करता है, स्वयं के शरीर के अन्दर ही स्वयं का पड़ोसी के रुप में विराजमान अक्षर पुरुष स्वयं के शरीर का संचालन करता है, और स्वयं को शरीर पर कोई भी अधिकार नहीं है, इस वजह से स्वयं की जानकारी के बिना ही शरीर के अन्दर रोगों का प्रवेश होता रहता है, कोई ग्रहण नहीं कर पा रहा है। किसी के पहचान में न आकर शरीर में अक्षर कहलानेवाला दूसरा पुरुष वास करता है।

शरीर में रहस्य से या गुप्त रुप में, कोई पहचान न सकें, अक्षर को गुप्त कहा गया। गुप्त का अर्थ है छुपा हुआ या नजर न आनेवाला। शरीर में प्रत्यक्ष रुप से कार्य करने पर भी , हर हरकतों का कारण होने पर भी, माया का नकाब ओढ़े प्रत्यक्ष रुप में बगल में होने के बावजुद भी मनुष्य की जानकारी में न आना बड़ी ही विचित्र बात है। सोचने और समझने से विचित्रता से मालूम होनेवाला पुरुष ही अक्षर पुरुष है। इस वजह दूसरे पुरुष को चित्रगुप्त कहा गया। हमारे शरीर में विचित्रता, तथा गुप्त रुप में रहता है, इसलिए उन्हे चित्रगुप्त कहना पड़ रहा है। तीसरा पुरुष जीव को क्षर कहा गया, दूसरा पुरुष अक्षर को आत्मा या चित्रगुप्त कहा गया। आदि पुरुष ईश्वर ही मूल पुरुष परमात्मा है। परमात्मा कोई कार्य नहीं करता इसलिए क्रियारहित कहा गया। जीव शरीर के अन्दर छोटे से केन्द्र में रहते हुए, कुछ न करते हुए केवल अपने कर्मों को अनुभव करता रहता है। शरीर के अन्दर रह रहा जीव भी क्रियाओं का आचरण नहीं करता है। अनेक लोगों को ऐसी बातें असत्य और आश्चर्य में डाल सकती हैं, परन्तु जीव अनुभव के अलावा अन्य कोई कार्य नहीं करता कहना सम्पूर्णत; सत्य है। पूर्णत; आश्चर्यजनक विषय यह है कि इस

सुविशाल विश्व में सभी जीवों के शरीर को हरकतें तथा संचालन करनेवाला एक आत्मा ही है। इस बात से सब अनजान हैं कि यही अक्षरात्मा चित्रगुप्त के रुप में वास करता है।

एक शरीर के अन्दर वास आत्मा दूसरे शरीर की हत्या कर सकती है। एक शरीर को ताकतवर बनाकर ताकत देकर मरवा भी सकती है। तथा दूसरे शरीर को कमजोर बनाकर मार खिलवा भी सकती है। इस प्रकार से सब के शरीर के अन्दर वास आत्मा, एक एक के साथ एक एक प्रकार से संचालन करते हुए अजीबों गरीब कार्यों को करवाते रहती है। जो मनुष्य आत्मा के विषय से अनजान हैं वे भ्रमित हो रहे हैं कि सारे कार्यों को उन्होंने स्वयं ही किया या कर रहे हैं। यही मनुष्य की अज्ञानता है, और मनुष्य समझ नहीं पा रहा कि उनके भावना के अनुसार ही पाप और पुण्यों की प्राप्ति होती है। हत्या आत्मा ने किया, हत्या पाप का भागी जीवात्मा को बनना पड़ा। वैसे ही कुछ अच्छे कार्यों को आत्मा करती है, किन्तु जीवात्मा(मैं)ने किया समझने की वजह से प्रतिफल के रुप में पुण्य प्राप्त होता है। जो कार्य जीवात्मा ने नहीं किया उसे अपनी अज्ञानतावश अहं के कारण मैंने किया समझना, पापों को शिक्ष(सजा) के रुप में, पुण्यों को अक्ष के रुप में जीव अनुभव करता रहता है। पापों और पुण्यों को भोगने से बचने के लिए लोग जितना भी प्रयत्न कर लें, चाहे अनेकों देवताओं की आराधना करें, किन्तु तेरा पड़ोसी तेरे शरीर के अन्दर वास आत्मा या चित्रगुप्त तुम्हें जरा भी क्षमा याचना नहीं देगा तथा तुझसे अनुभव करवाएगा ही। कोई भी व्यक्ति शिक्ष(सजा) को किस प्रकार से अनुभव करेगा, अनुभव होने तक कोई भी व्यक्ति जान नहीं सकता। वैसे ही कोई भी व्यक्ति किस प्रकार से कितना अक्ष अनुभव करेगा अनुभव होने तक कोई भी व्यक्ति जान नहीं सकता है।

एक कार्य होने का कारण, कर्म होता है। कार्य होने के पश्चात् कारण कर्म(पाप या पुण्य) समाप्त हो जाता है। जब कोई कार्य होता है उस कार्य से नये पाप और पुण्य उत्पन्न होते हैं, फिर भी उनसे आत्मा का कोई सरोकार नहीं होता है। जबकि कार्य को चित्रगुप्त या आत्मा ने किया उस कार्य से मिला प्रतिफल कर्म भी, आत्मा को ही प्राप्त होना चाहिए था, किन्तु आत्मा को प्राप्त नहीं हुआ। क्योंकि जिस प्रकार से अग्नि में आ गिरा कोई भी टिड्डा हो, या कोई भी कीड़ा हो, या कोई भी काठ हो, उसका जल जाना निश्चित है। उसी प्रकार से दूसरा पुरुष अर्थात् आत्मा शरीर का अधिपति, पूरे शरीर में व्याप्त होकर, शरीर द्वारा किया कार्य से उत्पन्न हुआ कोई भी पाप हो, या पुण्य हो, या बहुत बड़ा कर्म हो आत्मा को प्राप्त नहीं होता है। तीसरा पुरुष अर्थात् जीवात्मा शरीर के अन्दर एक स्थान पर स्थित है, हलांकि उसने भी कोई कार्य नहीं किया इसलिए जीव के लिए भी कर्म प्राप्ति की कोई गुंजाइश नहीं होती है। परन्तु जीव, जो कार्य उसने नहीं किया उस कार्य का दायित्व अपने ऊपर लेने की वजह से उस कार्य से जो कर्म उत्पन्न होता है वह जीव के खाते में चला जाता है। इस प्रकार से प्रपंच में शरीर को धारण कर पैदा हुआ जीव, जो कार्य उसने नहीं किया उस कार्य के प्रति कर्मबद्ध हो जाता है।

जीव से जुड़ा हुआ कर्म दूसरा पुरुष अर्थात् शरीर में जीव का पड़ोसी आत्मा, जीव के कर्म के अनुरुप कार्यों को कर, उस कार्यों में सुख और दुखों को जीव से अनुभव करवाता है। खुद को उस कर्म से संबंध न होने पर भी, तथा खुद कार्य न करने के बावजुद भी जीवात्मा अनावश्यक ही कर्म को अपने सिर लेकर, उस कर्म को अनुभव करने हेतु जीव को पुन; पैदा होना पड़ता है। जीव के शरीर के अन्दर "अहं या अहंकार" नामक भाग से प्रेरित होकर, जो कार्य उसने नहीं किया, उस कार्य का दायित्व अपने ऊपर लेकर, उससे उत्पन्न कर्म को अर्जित करने के कारण ही, जीव को कर्म अनुभव करना पड़ता है। अबतक हम सब ने जाना कि

अनुभव करनेवाला जीव है, तथा अनुभव करवानेवाला चित्रगुप्त की उपाधि प्राप्त आत्मा ही है। मनुष्य से हरकतें करवाकर, उसका संचालन कर, जीव से अनुभव करवानेवाला आत्मा है, ईश्वर शरीर के अन्दर साक्ष्य रुप में विराजमान है। जीव, जिसे चलवाया जाता है, या जिससे हरकतें करवायी जाती है, या जिसे हांका जाता है। चलानेवाला, हरकतें करवानेवाला, हांकनेवाला आत्मा है, और परमात्मा साक्ष्य रुप में है। इस विषय को ही "**त्रैत सिद्धान्त**" कहते हैं। तीन आत्माओं के बारें में त्रैत सिद्धान्त भगवद् गीता में, बाइबल में, क़ुरआन ग्रंथों में सूचित किया गया है। लेकिन मतों(धर्मों) के नशे में मस्त लोग तीन आत्माओं का विषयों से अनजान रह गए हैं। इसलिए अब पुन; स्मरण करवाया जा रहा है। उदाहरण हेतु क़ुरआन ग्रंथ में तीन आत्माओं के विषय में "काफ" 50 सुर; 21 वाँ आयत में इस प्रकार से है।

1) "दिव्य क़ुरआन ग्रंथ मे" 50-21 :- "हर जान यूं हाजिर हुई कि उसके साथ एक हांकने वाला और एक गवाह है।" लिखा गया।
2) "अन्तिम दैव क़ुरआन में" 50-21 ;- "हर जान यूं हाजिर हुई कि उसके साथ लाने वाला और एक गवाह है।" लिखा गया।
3) "दिव्य क़ुरआन संदेश में" 50-21 ;- " हर जान(आत्मा) एक हांकनेवाला और एक गवाह के साथ हाजिर होता है।" लिखा गया।
4) "क़ुरआन मजीद मे" 50-21 ;- "हर जान यूं हाजिर हुई उसके साथ एक आनेवाला तथा दूसरा गवाह है।" लिखा गया।

श्री कृष्ण जी के कहे हुए भगवद् गीता जिस प्रकार से संस्कृत भाषा में श्लोक रुप में लिखा गया, उसी प्रकार से जिब्राइल के कहे हुए क़ुरआन ग्रंथ अरबी भाषा में वाक्यों(आयतों) के रुप में लिखा गया। अरबी वाक्यों को हिन्दी में अनुवाद करनेवालों ने कई शब्दों को बदला किन्तु उनके भाव एक ही सूचित कर रहे हैं। मूल ग्रंथ भगवद् गीता संस्कृत भाषा में लिखा गया, इस वजह गीता में श्लोकों को संस्कृत में, तथा उसका विवरण

हिन्दी में लिखा गया। ठीक उसी तरह से क़ुरआन ग्रंथ में भी पहले वाक्यों(आयतों) को अरबी भाषा में, तथा उसका विवरण दिया गया। यहाँ हम सब को दैवज्ञान की जानकारी करनी हैं, इसलिए भाषा से अधिक भाव महत्व रखता है। अरबी भाषा को जाननेवाले कुछ क़ुरआन ज्ञानियों ने भाव का अनुवाद हिन्दी(तेलुगु) में किया। चार मुस्लिम पंडितों द्वारा लिखा गया चार क़ुरआन ग्रंथ को हमने देखा। सब के भाव एक ही होने की वजह से, हमें क़ुरआन ग्रंथ का वास्तविक भाव मालूम पड़ा। क़ुरआन में अरबी भाषा में 50-21 में इस प्रकार से दिया गया। □ व जाअत् कुल्लु नफसिम् म-अहा साइकुंव् व शहीद।□

क़ुरआन ग्रंथ के अनुसार परमात्मा साक्ष्य रुप में है, तथा लानेवाला, या हांकनेवाला चित्रगुप्त या आत्मा है। तुम जीव मात्र हो, तुझे हांकनेवाला आत्मा है। क्योंकि जीवात्मा कहलाने वाला स्वयं कोई कार्य नहीं करता है। इससे सिद्ध हो जाता है कि कार्य करनेवाला आत्मा, गवाह के रुप में परमात्मा, एवं अनुभव करनेवाला जीवात्मा है। शरीर में जीव विषय सुखों को अनुभव करता है, आत्मा शरीर के भागों को शक्ति प्रदान कर, शरीर का संचालन करते हुए जीव से अनुभव करवाता है, इसे ज्ञान नेत्रों से युक्त लोग मात्र ही देख सकते हैं भगवद् गीता में पुरुषोत्तम प्राप्ति योग 9,10 श्लोक में इस प्रकार से भगवान ने वर्णन किया है।

9 वाँ श्लोक ;- श्रोत्रं चक्षु; स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च ।
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते ।।

10 वाँ श्लोक ;- उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुज्जानं वा गुणान्वितम्
विमूढ़ा नानूपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुष; ।।

9 वाँ भावार्थ ;- कर्णों दारा ध्वनि को, चक्षुओं द्वारा दृष्टि को, त्वचा द्वारा स्पर्श को, रसना द्वारा रुचि को, नासिका द्वारा गंध को तथा मन पर जीवात्मा अधिष्ठ होकर सर्वदा विषय अनुभवों को अर्थात् सुख और दुखों को अनुभव करता रहता है।
10 वाँ भावार्थ ;- जीवात्मा अपने प्राप्त किये शरीर के अन्दर गुणों से युक्त, बाहर से आए विषय सुखों या दुखों को अनुभव करता रहता है। आत्मज्ञान रहित मूढ़ लोग इस विधान को नहीं देख पाते हैं। ज्ञाननेत्रों से युक्त लोग मात्र ही जीव की स्थिीति को जान सकते हैं।

यहाँ विशेष बात यह है कि शरीर में स्थित चक्षु, नासिका, कर्ण, त्वचा, तथा रसना को शक्ति प्रदान कर संचालन करनेवाला आत्मा, गुप्त रुप में पूरे शरीर में व्याप्त है। गुप्तरुप में रहने वाला शरीर के अव्यवों का संचालन करते हुए उनके द्वारा अन्दर में वास जीव से अनुभव करवाता रहता है। आत्मा द्वारा संचलन इन्द्रियाँ द्वारा जीव अनुभवों को प्राप्त करता है यह विषय ज्ञाननेत्र लोग मात्र ही जान सकते हैं, ज्ञानदृष्टि रहित लोग जरा भी जान नहीं सकते, इस बारें में स्पष्ट रुप में गीता में कहा गया। इतना ही नहीं सभी का संचालन करनेवाला आत्मा के बारें में शरीर में ही स्थित होने के विषय में, प्रयास करनेवाले योगियों को ही ज्ञात हो पाएगा। जो योगी नहीं हैं, जो प्रकृति दृष्टि से युक्त हैं वे आत्मा को नहीं जान सकते, इसी अध्याय में 11 वाँ श्लोक में बताया गया।
11) वाँ श्लोक यतन्तों योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् ।
यतन्तो ऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतस; ।।

प्रयत्न करनेवाले योगीजन मात्र ही पूरे शरीर में आत्मा का, किस प्रकार से प्रकरण चल रहा है देखते हैं। प्रकृति ज्ञान को जाननेवाले स्थूल को ही जान पाते हैं, सूक्ष्म आत्मा को नहीं।

वस्त्र को धारण कर मनुष्य, मैं वस्त्र नहीं हूँ मैं वस्त्र के अन्दर हूँ याद में रहता है। कोई भी मूर्ख नहीं सोचता कि धारण किया हुआ वस्त्र ही मैं हूँ। जीव शरीर को वस्त्र की तरह धारण करता है, शरीर अलग मैं अलग याद न रहने के कारण, शरीर को देखकर शरीर ही मैं हूँ, समझ बैठा है। शरीर को ही स्वयं समझनेवाला शरीर द्वारा हो रहे सभी कार्यों को स्वयं ही कर रहा समझ बैठा है। जीव कुछ भी सोचे, शरीर द्वारा हो रहे कार्यों के कारण ही जीव दुखों को प्राप्त कर रहा है। शरीर के अन्दर बुद्धि स्वयं की न होते हुए भी, अपने आप को प्रतिभावान कहता रहता है। उसे बुद्धि द्वारा ही कष्ट क्यों आते रहते हैं मनुष्य, जान नहीं पा रहा है। शरीर में निवास जीव के जानकारी के बिना ही शरीर में वास आत्मा ही, जीव को सुखों और दुखों की ओर ले जाती है। पहले भी बताया गया है कि जीव द्वारा अपने शरीर के अन्दर कष्टों के अनुभव को शिक्ष(सजा), तथा सुखों को अक्ष कहते हैं। पहले आपने पुछा था कि अक्ष का क्या अर्थ होता है ? अब इस प्रश्न का उत्तर जानने की कोशिश करते हैं।

कष्ट को सूचित करता है शिक्ष(सजा), तथा सुख को सुचित करता है अक्ष, इन दोनों शब्दों में "क्ष" नामक अक्षर है। "क्ष" अर्थात् नष्ट होना, क्षीण हो जाना। "शि" अर्थात् बिना रुकावट या शीघ्रता से। शीघ्रता से नष्ट होना, बिना रुकावट कमजोर पड़ जाने को शिक्ष(सजा) कहते हैं। ठीक वैसे ही अक्ष नामक शब्द में "अ" का अर्थ रुकावट बनना, या जिसका निवारण न हो। यदि अश्रद्धा(असावधानी) नामक शब्द को देखा जाय तो, श्रद्धा न होना कह सकते हैं। विवेक के आगे "अ" नामक अक्षर जोड़ा जाय तो वह अविवेक होता है यानि विवेक शून्य हो जाना सूचित करता है। वैसे ही "क्ष" नामक अक्षर के आगे "अ" अक्षर जोड़ा जाए तो नाश रहित, सूचित करता है। नाश में जीव दर्द महसूस करता है। इसलिए बड़े-बुजुर्गों ने कहा है कि बिना रुकावट या शीघ्रता से प्राप्त दर्द को शिक्ष(सजा)

कहा जाता है। वैसे ही बिना बलहीनता के, या बिना नाश के प्राप्त सुख को अक्ष कहा जाता है।

शरीर में जीव को प्राप्त दुख को शिक्ष(सजा) कहा गया, तथा जीव को प्राप्त सुख और संतोष को अक्ष कहते हैं। किसी जीव के लिए प्राप्त शिक्ष(सजा) और अक्ष हो, प्रकृति मार्ग में हो, या दैव मार्ग में हो दो प्रकार के होते हैं। प्रकृति मार्ग में हर मनुष्य शिक्ष(सजा) और अक्ष को अनुभव करता है। कर्म से ही पाप और पुण्य प्राप्त होते हैं, इसे आत्मा ही अनुभव करवाता है। दैव मार्ग में शिक्ष हो या अक्ष हो उसे भी अमल करवानेवाला आत्मा ही है, ये कर्म में लिखे नहीं रहते हैं। बाहरी कोर्ट में शिक्ष(सजा) कानून के अनुसार अमल में लाया जाता है, प्रकृति जनित शरीर के अन्दर शिक्ष(सजा) कर्मानुसार होता है, दैव मार्ग में शिक्ष(सजा) और अक्ष दैवधर्म के अनुसार मिलते है। यहाँ पर थोड़ा विस्तार से समझने की आवश्यकता है। मनुष्य द्वारा किया गया कोई भी कार्य हो, या बातें करना हो, या बुद्धि द्वारा कहलवाया गया सिद्धान्त हो, या सोच हो, या प्रतिभा हो सब आत्मा के कारण ही उत्पन्न होते हैं। जीव की इच्छानुसार कुछ नहीं होता है। सब कुछ आत्मा के कारण से ही होते रहते हैं। मनुष्य अपनी अज्ञानता में पड़कर आत्मा द्वारा किया गया कार्य को उसने ही किया भ्रमित होकर, या भ्रमित न होने पर भी सारे कार्य आत्मा ही करती है। कोई भी कार्य करने के लिए जीव को हक नहीं होता है, न ही अवसर मिलता है। सब कर्म के अनुसार ही आत्मा शरीर द्वारा करवाती है।

हलांकि दैवमार्ग में जीव का कोई कर्म नहीं होता है। दैव मार्ग में कर्मानुसार कोई कार्य नहीं होता है। प्रकृति मार्ग में कार्यों के विषय में जीव का कोई हक नहीं बनता है, परन्तु दैवमार्ग में वह सम्पूर्णत; स्वतंत्र है। दैवमार्ग में अपने इच्छानुसार करने के लिए जीव का पूरा हक बनता है। दैवमार्ग के सारे कार्य जीव की इच्छा पर निर्भर करता है। प्रपंच विषयों

में जिस प्रकार से जीव अस्वतंत्र है, वैसे ही दैव मार्ग में जीव पूर्णत; स्वतंत्र है, कह सकते हैं। प्रपंच से संबंधित सारे कार्य कर्म के आधीन में ही होता है, किन्तु दैव संबंधित कार्यों में जीव का जन्म सिद्ध अधिकार होता है। वह भी जीव की इच्छा पर निर्भर करता है। दैव मार्ग में इच्छा रखनेवाला व्यक्ति जितना चाहे ज्ञान अर्जित कर सकता है। हर व्यक्ति को दैव मार्ग में आगे बढ़ने के लिए अवसर मिलता है, परन्तु यदि जीव की इच्छा न हो तो वह दैव मार्ग में प्रयाण नहीं कर पायेगा। कुछ लोग दैव मार्ग में बहुत ही कम दिलचस्पी रखते हैं। इसलिए उन्हें ज्ञान भी कम ही लब्ध होता है। अतएव गीता में ज्ञान योग 39 श्लोक में "श्रद्धावाँलभते" ज्ञानं कहा गया। कर्मावाँलभते कार्यं कहने के अनुसार कर्म के अनुसार ही कार्य होता है, मनुष्य के श्रद्धानुसार नहीं।

जिस प्रकार से मनुष्य के कर्मानुसार होनेवाले कार्यों में शिक्ष(सजा) और अक्ष दोनों होते हैं, वैसे ही मनुष्य(जीव) के श्रद्धा के अनुसार ही प्राप्त हुए ज्ञान में भी शिक्ष(सजा) और अक्ष दोनों होते हैं। इसमें भी परमात्मा का निर्णय के अनुसार ही आत्मा कार्य करती है। मनुष्य को ज्ञात रहना चाहिए कि प्रपंच विषय में हो, या परमात्मा विषय में हो जीव कोई कार्य नहीं करता है, दोनों मार्गों में कार्य आत्मा ही करती है। शरीर को जिस मार्ग में ले जाना हो, शरीर की अधिपति आत्मा ही ले जाएगी। जीवात्मा भी परमात्मा के जैसे ही बिना कोई कार्य किए शरीर के अन्दर उस तक पहुँचनेवाले अनुभवों को मात्र ही अनुभव करता रहता है। एक ओर जीव, तथा दूसरी ओर ईश्वर जिन कार्यों को वे नहीं करते, उन सभी कार्यों को आत्मा अविराम निरन्तर करती रहती है। जब कोई वैज्ञानिक किसी सूत्र के अनुसार एक नये औषधि की खोज करता है, या नये उपकरणों की खोज करता है, सारे कार्यों को आत्मा ने किया लेकिन जीव यही मान कर चलता है कि यह खोज उसने की। और उस वैज्ञानिक के आस-पास के

लोग भी यही समझते हैं कि उस व्यक्ति ने खोज की, वास्तव में मनुष्य गलतफहमी का शिकार है।

प्रपंच कार्यों में पंडित से लेकर पामर तक, उद्योगपति से लेकर कारीगर तक, वैज्ञानिक से लेकर मूर्ख तक, तथा राजा से लेकर रंक तक प्रपंच से संबंधित सभी कार्यों को आत्मा करती है न ! उसी प्रकार से दैव मार्ग में बड़ा ज्ञानी से लेकर छोटे ज्ञानियों तक सभी का संचालन आत्मा ही करती है। उनकी अपनी श्रद्धा के अनुसार ही उन्हे ज्ञान समझ में आना भी आत्मा ही करती है। ज्ञान मार्ग में किसे किस स्तर तक ले जाना हो, ले जानेवाली आत्मा ही होती है भूलना नहीं चाहिए। वैसे ही दैव मार्ग में गलती के लिए शिक्ष(सजा), तथा सही के लिए अक्ष का अमल करनेवाला भी आत्मा ही है जानना चाहिए। प्रपंच विधान हो, या परमात्मा विधान हो ऐसा कोई कार्य नहीं है जिन्हें आत्मा नहीं करती है।

इस प्रकार फैसले में भी प्रकृति फैसला, तथा परमात्मा फैसला को दे भागों में विभाजित कर देख सकते हैं। प्रकृति फैसला शरीर पर किया जाता है, उसकी वजह से स्वर्ग और नरक को सुख और दुख के रुप में अनुभव करना पड़ता है। परमात्मा फैसला सूक्ष्म रुप से जीव के लिए किया जाता है, उसकी वजह से जन्म, या मोक्ष प्राप्त करता है। प्रपंच संबंधित फैसले में शिक्ष(सजा) की अपेक्षा, परमात्मा फैसले में जन्म भयंकर होते हैं कह सकते हैं। प्रपंच संबंधित फैसले में पापों को दूसरे जन्म में शिक्ष(सजा) के रुप में भोगना पड़ सकता है। परन्तु, परमात्मा फैसले में प्राप्त होनेवाले जन्मों में एक जन्म से समाप्त नहीं होता, युगों पर्यंत तक जन्मों को लेना पड़ता है। इसलिए परमात्मा फैसला बहुत भयंकर होता है। परमात्मा फैसले में अक्ष आए तो दोबारा जन्मों में न जाकर मोक्ष प्राप्त करता है। शिक्ष आए तो जन्म परम्परा में मानव फँसा रह जाता है। अनेक लोग शिक्ष(सजा) शब्द से सुपरिचित ही हैं, किन्तु अक्ष शब्द की जानकारी

शायद लोगों को नहीं रही होगी कह सकते हैं। थोड़ा विचार करें तो अक्ष शब्द का प्रयोग पूर्व मनुष्य किया करते थें। पूर्व अक्ष उच्चरित होनेवाला शब्द को आज मोक्ष कहा जा रहा है। पूर्व "अक्ष" शब्द कालक्रम में मोक्ष शब्द में परिवर्तित हो गया। "क्ष" के आगे "अ" हटकर "मो" जुड़ गया। कुछ समय बाद मोक्ष कहा जाने लगा। पूर्व जब प्रपंच संबंधित कष्ट निवारण होता तब अक्ष शब्द का उपयोग किया करते थें। आज भी प्रपंच कष्टों से छुटकारा मिलने पर, कष्टों से मोक्ष मिल गया कहते रहते हैं। कालगमन में "**अ**" "**मो**" में परिवर्तित हुआ अक्षर है, मुख्यरुप से विशेष अर्थ देता हुआ अक्षर "क्ष" जरा भी नहीं बदला।

फैसला या निर्णय में शिक्ष(सजा) और अक्ष हो सकते हैं। फैसला प्रपंच संबंधित हो सकता है या परमात्मा संबंधित हो सकता है। दोनों प्रकार के फैसलों को परमात्मा ने पहले ही निर्णित कर रखा, आत्मा उसे अमल में लाती है। आत्मा अमल में लाने के बावजुद इसे परमात्मा का ही निर्णय कहा जाएगा। मनुष्य पर संभवित प्रपंच संबंधित सुख-दुख हो, जन्म-मोक्ष कुछ भी हो परमात्मा की जानकारी के बिना कुछ भी संभव नहीं है। जो कुछ भी होता है परमात्मा के फैसले के अनुरुप ही होता है स्मरण रहना चाहिए। परमात्मा का निर्णय कैसा होगा पहले से ही कोई नहीं जानता है। किसके लिए कौन सा फैसला लिया गया, किसे क्या अनुभव करना होगा ईश्वर सब जानता है। इसी विषय के बारें में भगवद् गीता में विज्ञानयोग 26 श्लोक में इस प्रकार से दिया गया है।

26 श्लोक// वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन ।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन ।।

भावार्थ ;- जो पूर्व में हो चुके हैं उन प्राणियों को एवं जो वर्तमान हैं और जो भविष्य में होने वाले हैं उन सब भूत भविष्य वर्तमान को मैं जानता हूँ मुझे अन्य कोई नहीं जानता।

परमात्मा सब को जानते हैं, परन्तु परमात्मा को कोई नहीं जानता। परमात्मा पुरुष है, आत्मा तथा जीवात्मा भी पुरुष ही हैं। दूसरा पुरुष आत्मा शरीर में सभी कार्यों को करता है, किन्तु आत्मा किसी भी कार्य का कर्ता नहीं है। कर्म के अनुसार निमित्त मात्र ही आत्मा कार्य कर रहा है। इस वजह कहा जाता है कि आत्मा कर्ता नहीं है। सब के कारण और कर्ता मूल पुरुष परमात्मा है, परन्तु परमात्मा कुछ नहीं करता है। आत्मा शरीर में मात्र विधि का अनुसरण कर रहा है।शरीर से बाहर अनंत विश्व में, शरीर के अन्दर में सारे कार्यों की कर्ता बनकर कार्यों को करने वाली प्रकृति ही है कह सकते हैं। परमात्मा, तथा परमात्मा जितनी शक्तिशाली है प्रकृति। प्रकृति का अनुसरण करते हुए आत्मा भी कार्य करने के कारण, प्रस्तुत प्रकृति को कर्ता कह सकते हैं। इसी विषय में भगवद् गीता में क्षेत्र क्षेत्रज्ञ विभाग योग 30 श्लोक में,

30 वाँ श्लोक प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वश; ।
य; पश्यति तदात्मानमकर्तारं स पश्यति ।।

भावार्था ;- सभी कार्य प्रकृति द्वारा सम्पादन किये जाते हैं इस प्रकार जो देखता है, वह ही जान पायेगा कि किसी भी कार्य के कर्ता आत्मा नहीं है। जो इस प्रकार से देखते हैं उन्हें यथार्थ ज्ञानदृष्टि युक्त कह सकते हैं।

शरीर के अन्दर आत्मा सारे कार्य करती है, शरीर के बाहर पूरे विश्व में प्रकृति प्रविष्ट होकर धूप, वायु, वर्षा, हिम के रुप में रहते हुए, भूकंप, सुनामी, टोरंटो(बवंडर मेध), तूफानी मेघ (क्युमलोनिम्बस मेघ) के रुप में बाहर सारे कार्यों को प्रकृति करती है। विश्व में प्रकृति सर्व स्वतंत्र है। आत्मा शरीर में शरीर की अधिपति के रुप में रहकर मनुष्य के कर्मानुसार मनुष्य द्वारा कार्य करवाती है। आत्मा अपनी इच्छानुसार कुछ नहीं करती है, कर्म के अनुसार मनुष्य से करवाने के कारण आत्मा स्वयं कर्ता नहीं है। इतना ही नहीं मनुष्य(जीव) के पाप या पुण्य के अनुसार ही

संचालन करना आत्मा का कार्य है। किसी को भी पाप-पुण्य से मुक्ति दिलाना आत्मा का कार्य नहीं है। इतना ही नहीं कर्मों को, या कार्य करने की इच्छा हो, या कार्य में कर्ता की भावना आत्मा उत्पन्न नहीं करती है। जीव की अपनी भावना होती है, जो जीव को उत्पन्न होता है। इसी विषय में भगवद् गीता में कर्म सन्यास योग अध्याय में 14, 15 श्लोक में,

14 वाँ श्लोक न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य प्रभु; ।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते ।।

15 वाँ श्लोक नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभु; ।
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तव; ।।

14 वाँ भावार्थ ;- पाप-पुण्य कर्म हो, या हो रहे कार्यों का कर्ता मैं की भावना हो, कर्मफल के प्रति आसक्त हो आत्मा उत्पन्न नहीं करती है। सारे जीव के अपने भावना(इष्ट) द्वारा ही होता है।
15 वाँ भावार्थ ;- शरीर का अधिपति आत्मा किसी को भी पाप और पुण्यों से मुक्त नहीं कर सकता है। सम्पूर्ण आत्मज्ञान अज्ञान से ढ़का हुआ है। इस कारण आत्मा का विषय को कोई जान नहीं पाया।

जीव का पूरा शरीर प्रकृति द्वारा बना हुआ है। पंच महाभूतों में प्रकृति 25 भागों में बँट कर 25 शरीर के भागों में तथा उससे अनुबंधित अव्यवों का निर्माण हुआ है। प्रकृति द्वारा निर्मित शरीर के भागों को शक्ति देकर आत्मा कार्य करवाती है। प्रकृति द्वारा शरीर का निर्माण ही नहीं बल्कि शरीर केअन्दर गुण भी प्रकृति द्वारा ही निर्मित हुए हैं। अप्रत्यक्ष गुण मनुष्य के सिर में रह कर, मनुष्य को कर्म प्राप्त करवाते हैं। करवानेवाली आत्मा होते हुए भी, अच्छे-बुरे कार्य गुणों से प्रेरित की वजह प्रकृति उत्पन्न करवाती है। प्रकृति स्वभाव के द्वारा कार्यों के प्रति इच्छा उत्पन्न होना, कार्य होते रहने की वजह से उनके द्वारा पाप और पुण्य प्राप्त होते

रहते हैं। बाह्य प्रत्यक्ष प्रकृति, शरीर में अप्रत्यक्ष गुणों के रुप में स्थित है। सारे गुणों को प्रकृति कहा जाता है। इससे कह सकते हैं कि प्रत्यक्ष प्रकृति देह में अप्रत्यक्ष माया के रुप में स्थित है। मनुष्यों में कार्य के प्रति आसक्त को, कर्म की कर्ता है प्रकृति, आत्मा शरीर की अधिपति बनकर शरीर के भागों को ऊर्जा देकर संचालित करते हुए कर्मों को शिक्ष(सजा), और अक्ष के रुप में अनुभव करवाती है जानकारी हुई। अबतक ज्ञान की जो जानकारी हुई वह अच्छी तरह से स्मरण में रह सके इसलिए नीचे सूची में बनाया गया है।

अबतक हमलोगों ने तीन पुरुषों अर्थात् तीन आत्माओं के बारें में, स्त्री अर्थात् प्रकृति के बारें में, शरीर के अधिपति बनकर जो सारा कार्य करवा रहा आत्मा अर्थात् चित्रगुप्त के बारें में जानकारी की। और साथ ही हम लोगों ने जाना कि जीव, जिसने गलत-सही कार्य नहीं किया फिर भी अपनी अज्ञानतावश अनावश्यक ही उत्तरदायी बना तथा कष्ट एवं सुखों को प्राप्त कर रहा है। फैसले में दो प्रकार के फैसलों के बारें में बातें की। हमारे द्वारा लिखा जा रहा इस ग्रंथ का मुख्य अंश है फैसला, इसलिए अब फैसले के बारें में ही अधिक से अधिक बातें करते हैं। फैसले में प्रकृति संबंधित शिक्ष(सजा) और अक्षों को सभी प्रत्यक्ष रुप से अनुभव करते रहने के बावजुद, मनुष्य अपनी अज्ञानतावश सोचता रहता है कि पुण्यों को स्वर्गलोक में, तथा पापों को नरकलोक में भोगना पड़ता है। सब मतों(धर्मों) में उनके मूल ग्रंथों में स्वर्ग और नरक के बारें में कहा गया है। स्वर्ग को सुखों का निवास, तथा नर्क को कष्टों का निवास कहा गया, बिलकुल सही बात है। उन प्रत्यक्ष लोकों के बारें में कहीं बताया नहीं गया। मनुष्य अपनी अज्ञानता के कारण अनहोनी विषयों की कल्पना कर, अनजान एवं अनदेखा स्वर्ग और नरकों को प्रत्यक्ष लोक बताया जा रहा है। इस प्रकार से अंधों की तरह बातें करने के अलावा, उनके काल्पनिक लोकों का कहीं भी कोई अता-पता उन्हें मालूम नहीं रहता है। जब से सृष्टि आरम्भ हुई

अब तक कोई भी मनुष्य स्वर्ग, नरक नहीं गया। किसी ने भी उन लोकों को नहीं देखा। अपने तर्क को सही ठहराने हेतु अगर कोई कहता है कि हमने देखा है तो, वह पूर्ण असत्य कह रहा है।

स्वर्ग और नरक अनुभव करना मात्र अनुभूतियाँ हैं। ये कोई प्रत्यक्ष लोक नहीं हैं। सुखों को स्वर्ग तथा कष्टों को नरक कह सकते हैं। बिना किसी शास्त्रबद्धता, मूर्खता से मान लिया जाय तो, वह अज्ञानता कहलायेगी ज्ञान नहीं। जिस प्रकार से "एक गंदी मछली सारे तालाब को गंदा बना देती है" उसी प्रकार से कई बोधकों ने गलत बोध कर लोगों को गलत रास्ते में ले जा रहे हैं। अगर प्रपंच विषयों में गलत भावना रखता तो, उसकी वजह से पाप का भागीदार बनना पड़ता है। और पाप के कारण शिक्ष(सजा) नरक भोगना पड़ सकता है। नरक सदा भोगना नहीं पड़ता है। जितना पाप हो उतना ही नरक प्राप्त होता है। दर्द का अनुभव पाँच या दस मिनट तक रह सकता है और उस दर्द के अनुभव को ही नरक कह सकते हैं। नरक क्षणकाल या उससे ज्यादा भी हो सकता है। नरक और स्वर्ग की प्राप्ति जीव के पाप के आधार पर होती है। मनुष्य के जीवन में ही स्वर्ग का सुख, तथा नरक के कष्ट लगे रहते हैं। स्वर्ग अर्थात् सुख इसलिए इसे समझने हेतु स्वर्गसुख कहा गया। नरक अर्थात् पीड़ा इसलिए इसे समझने हेतु नरक की पीड़ा कहा गया। प्रपंच में एक ही समय में अनेक सुखों और दुखों को अनुभव करते हुए लोगों को, देखते रहते हैं। स्वयं हम सब ने भी अनेक समयों में स्वर्ग सुखों को, तथा नरक यातनाओं का अनुभव किया। सारे सुख और दुख इस धरती पर ही स्वर्ग और नरक के नाम से होते रहते हैं। भगवद् गीता में हो, या बाइबल में हो, या क़ुरआन में हो यथार्त् स्वर्गलोक, नरकलोक के बारें में बताया गया है। फिर भी स्वर्गलोक और नरकलोक कहीं पर होगा ऐसी धारणा बनानी नहीं चाहिए। मेरी ये बातें कई लोगों को बेस्वाद, कई लोगों को कटु तथा कठिन प्रतीत हो सकता है। जिस प्रकार से ज्वर से पीड़ित व्यक्ति की जीभ

रुचि ग्रहण नहीं कर सकती है, और मीठा पदार्थ भी कडुवा प्रतीत होता है। वास्तव में पदार्थ मीठा था परन्तु रोग के वजह से उसे कडुवा प्रतीत हो सकता है। इसलिए मीठा को कडुवा कहना असत्य ही होगा न !

अन्य भाषा(तेलुगु) में सोचना शब्द को आलोचन कहा जाता है। उसी आलोचन शब्द से संबंधित ज्ञान की बारें करेंगें। आलोचन का अर्थ है गहराई से सोचना, गंभीरता से सोचना। "आ" अक्षर आकार, गहराई, तथा गंभीरता की विशेषता बताता है। हमारा कहना है कि लोचन नामक शब्द में "आ" अक्षर की विशेषता है। लोचन अर्थात् नजर आनेवाला या दिखलाई पड़नेवाला। लोचन को दर्पण भी कह सकते हैं। अच्छी तरह से नजर आनेवाले आँखों के दर्पण को सुलोचन कहते हैं। मुख्य रुप से हमारा कहना यह है कि लोचन शब्द से उत्पन्न हुआ लोक शब्द। लोक अर्थात् जिसे नेत्रों द्वारा अच्छी तरह से देख सकते हैं। इसका तात्पर्य है हम लोग जिस लोक के बारें में भी बातें करते हैं, वे सारे लोक नजर आते हैं। अब हम असल विषय की चर्चा करते हैं। स्वर्गलोक का अर्थ नजर आनेवाला सुख कह सकते हैं। तथा नरकलोक का अर्थ नजर आनेवाला कष्ट कह सकते हैं। स्वर्गलोक नाम नजर आनेवाला सुख अर्थ देता है, अप्रत्यक्ष स्वर्गलोक कहीं पर है कहना, क्या शास्त्रबद्ध, और धर्मबद्ध हो सकता है ? ऐसा मैं प्रश्न पुछ रहा हूँ।

जब मनुष्य को (जीव को) अनुभव में सुख की अनुभूति होती है, तब उसे(जीव को) स्वर्ग की प्राप्ति समझनी चाहिए। जब मनुष्य को अनुभव में शरीर में ही जीव को दर्द की अनुभूति होती है, तब उन्हे नरक की प्राप्ति समझनी चाहिए। इस प्रकार से सुखों और दुखों को अर्थात् स्वर्ग और नरक को मनुष्य धरती पर ही प्रत्यक्ष रुप में अनुभव करता है। तथा वह अनेक लोगों को अनुभव करते हुए देखता रहता है। फिर भी लोक का अर्थ बिना समझे स्वर्गलोक ऊपर कहीं पर, तथा नरकलोक नीचे कहीं पर

है कथाएँ ककी गयी, एवं पुराण लिखें गए हैं। आत्मा का अध्ययन करना ही आध्यात्मिक कहलाता है। जिन्हे आत्मसाक्षात्कार ही न हुआ हो उन्हे आध्यात्मिकता कैस मालूम हो पाएगा? कुछ लोग अद्वैत जानते हैं, कुछ लोग द्वैत जानते हैं, परन्तु त्रैत के बारें में कोई नहीं जानता। आध्यात्मिक नाम से सब परिचित हैं, किन्तु पूर्ण विवरण कोई नहीं जानता कह सकते हैं।

विचित्र बात यह है कि अपने आपको आध्यात्मिक कहनेवाले, कई स्वामीगण, खुद को गुरु बतानेवाले कहते हैं कि मनुष्य मृत्यु के पश्चात् पहले स्वर्ग में, उसके बाद नरक में जाता है। जबकि ये बातें असत्य हैं, और परमात्मा द्वारा व्यवस्थित विधान के विपरीत बोध करना कहा जाएगा। जिस प्रकार से एक साधारण व्यक्ति जो सड़क परिवहन कार्यालय का अधिकारी नहीं है अपने को R.T.O कहकर, सड़क पर हर आने-जानेवाले वाहनों को रोककर उनसे अपराध शुल्क वसूल करता है। जबकि यह गलत है और कानूनन जुर्म भी है। और वह व्यक्ति कानून की नजर में दोषी माना जाएगा। उसी प्रकार से जब तक गुरु का ओहदा, स्वामीजी का अधिकार न मिलें, दुनिया के सामने जो व्यक्ति स्वामीजी, गुरु के रुप में अपनी पहचान बना कर, लोगों से आदर-सत्कार पाता है, परमात्मा के कानून में जुर्म होगा। और वह धर्म की दृष्टि से सजा के योग्य है।

इस विषय में कुछ लोगों का कहना है कि हमारे गुरुओं ने हमें इसी प्रकार से बताया है। उनके बाद गुरु परम्परा को कायम रखते हुए गुरु के बताये बोधों को बोधन कर रहे हैं। अगर बोध गलत हुआ तो दायित्व गुरु की ही होगी, हमारी नहीं कह रहे हैं। इतना ही उन लोगों का कहना है कि गुरु के बताये बोध का बोधन करना ही हमारा पारम्परिक धर्म है। ऐसे लोग न ही गुरु का अर्थ जानते हैं, और न ही उन्हें धर्म का अर्थ मालूम है, न ही परम्परा का विवरण मालूम है। फिर भी शब्दों का उपयोग

करत रहते हैं। परमात्मा और भगवान कौन है कोई नहीं जानता है। परमात्मा और भगवान को एक ही समझते हैं, इस वजह आज विश्व विख्यात हिन्दू(इन्दू) धर्म क्षीण होता जा रहा है, वो दिन दूर नहीं जब लोग हिन्दूमत(इन्दूधर्म) से ही अनजान हो जायेंगे इन्दूधर्म की रक्षा नाम से कई लोगों ने अशास्त्रीय बोधन करते हुए, पुराण की कथाओं को कहते रहते हैं, इस कारण, इन्दू अपने धर्म से, अपने परमात्मा से अनजान होकर अस्त-व्यस्तता की स्थिीति में पड़कर अन्य मत(धर्म) बोध की आकर्षित हो रहे हैं। कई लोगों ने अपना धर्म परिवर्तन भी कर लिया।

पाँच हजार वर्ष पूर्व ही, भगवद् गीता श्रीकृष्ण द्वारा बताने से पूर्व ही, पूरे भारतवर्ष में वेद, और पुराण प्रचार में थे। वेदों के अन्तिम भाग उपनिषदों में कहीं-कहीं यमलोक का होना बताया गया, तथा वहाँ जाकर लौटनेवाले लोगों के बारें में बताया गया। पुराणों में सती सावित्री के बारें में बताते हुए कहा गया कि सावित्री ने अपने पति के प्राण को यमराज से तर्क वितर्क कर वापस ले आयी और अपने पति को जीवित किया। कई लोगों ने तो स्वयं ही जाकर देखकर आने की तरह बताते हुए कहते हैं कि यमलोक जाने के लिए वैतरणी नदी को पार करना पड़ता है, उस नदी में दुर्गधं से भरी रक्त-मांस के टुकड़े बहते रहते हैं। गरुण पुराण में विशेष रुप से यमलोक के बारें में ही बताया गया है। फलाँ कार्य करने से फलाँ पाप आता है, फलाँ पाप से फलाँ शिक्ष(सजा) मिलती है, लिखा गया। यमलोक में पापों के बारें चित्रगुप्त एक ग्रंथ लिखते हैं, उस ग्रंथ में सब के पापों का लेखा-जोखा रहता है। मनुष्य मरने के बाद जब यमलोक जाता है तो चित्रगुप्त उसके पापों का लेखा-जोखा कर बताता है, उसे सुनकर यमराज उसके पापों के योग्य शिक्ष(सजा) देते हैं, लिखा गया। इतना ही नहीं, यमराज द्वारा सुनाया गया शिक्ष(सजा) को अमल में लाने के लिए अनेक यमदूत भी होते हैं, वे किसी पर दया नहीं करते हैं केवल शिक्ष(सजा) अमल करते हैं, पूरे यमलोक में चीख-पुकार ही सुनाई पड़ती है, कहा

गया। गरुड़ पुराण में नरक के बारें में बताते हुए कहा गया है कि यमदूत पापियों को खौलते तेल में तलना, अग्नि में डालकर जलाना, भालों से भोकना, बड़े-बड़े पत्थरों के नीचे दबाना ऐसे अनेक प्रकार से यातना देते हैं बताया गया। पापों की समाप्ति होने तक मनुष्यों को यमदूत यातना देते रहते हैं, वहाँ से मनुष्य अपने पुण्य को भोगने के लिए स्वर्गलोक में जाता है पुण्य समाप्त होने तक स्वर्गलोक में रंभा, उर्वशी के मध्य में रहकर अनेक सुखों को भोगकर, अन्त में त्रिमुर्तियों अर्थात् ब्रम्हा, विष्णु, महेश्वर के पास जाकर अपना नया भाग्य लिखवाकर वापस धरती पर पैदा होते हैं, लिखा गया।

इस प्रकार से बोलते रहे तो एक ग्रन्थ बन जाएगा। द्वापरयुग में व्यासजी ने चार वेदों, अठारह पुराणों की रचना की, इसलिए उन्हे वेदव्यास कहा गया। अनेकों महर्षियों द्वारा बोधित विषयों को स्वीकार कर उन्होंने उपनिषदों को, वेदों के अन्तिम भाग में लिखा। जिसने उपनिषद बताया, उस उपनिषद पर उन्ही का नाम रखा गया। उदाहरण के लिए त्रैत्तरी महर्षी द्वारा बताया गया बोध को व्यास ने उपनिषद के रुप में लिखते हुए उस उपनिषद पर उस त्रैत्तरी महर्षि के नाम से त्रैत्तरीयोपनिषद रखा। इस प्रकार से व्यास ने जिस उपनिषद को जिसने लिखा उनका नाम ही उस उपनिषद का पड़ा। चार वेदों, तथा अठारह पुराणों को व्यास ने ही लिखा। उस समय उन्हे जो उचित लगा वही लिखा। इस वजह सत्य दब गया और असत्य प्रचार में आ गया। और धर्म भी दबा रहा और अधर्म बर्हिगत हो गया। उस जमाने में व्यास एकमात्र ख्याति प्राप्त रचयिता थे, इसलिए सबने उनके पुस्तकों को पढ़ा, और अधर्मि बन गए। यह सब वास्तव में घटित सत्य है, इसमें भी कुछ अप्रत्यक्ष सत्य छुपा हुआ है। यही सब के लिए मुख्य रहस्य है।

बाहर नजर न आनेवाला रहस्यमयी सत्य इस प्रकार से है! व्यास ने जो लिखा था उसमें असत्य और अधर्म था, वास्तव में लिखनेवाला व्यास नहीं था। इस बात को सुनकर आप सब को आश्चर्य हो सकता है, फिर भी व्यास हम सब के लिए प्रत्यक्ष व्यक्ति है, किन्तु व्यास अपने शरीर में केवल जीवात्मा थे। कोई भी जीवात्मा, शरीर के अन्दर केवल सुख और दुख को अनुभव करने के लिए ही रहता है, कार्य को करने के लिए नहीं। जीव सब तरह से अंधा होता है, उन तक जो पहुँचता है उसे अनुभव करने के अलावा कोई भी कार्य न कर पाने वाला अंगहीन है। सारे अव्यव शरीर के होते हैं उसके नहीं। पूरा शरीर आत्मा का होता है, जीव का नहीं। जीव शरीर में एक भाग ही है, स्वयं कुछ नहीं कर सकता, जीव में कार्य करने की शक्ति नहीं रहती है। शरीर में होनेवाले हर कार्य को दूसरा पुरुष अर्थात् चित्रगुप्त अर्थात् आत्मा के कारण ही होता रहता है। बड़े से बड़े कार्य वेदों, पुराणों की रचना आत्मा ने किया।

शरीर तो व्यास का ही था, परन्तु लिखनेवाला वास्तव में व्यास नहीं था। यहाँ एक प्रश्न उठ सकता है, आत्मा ने स्वर्ग-नरक के बारें में असत्य, तथा आध्यात्मिकता के बारें में अधर्म क्यों लिखा। जबकि पूरी आध्यात्मिकता आत्मा के बारें में जानकारी करने के लिए होती है न! ऐसे में अपने विषय में ही स्वयं आत्मा ने दूसरे राह में क्यों भटकाया? परमात्मा मार्ग में यह बहुत बड़ी गलती है, गलती को जानते हुए भी, आत्मा ने ऐसा किया, इसका मतलब है अवश्य ही कोई बहुत बड़ा कारण हो सकता है न! उस कारण के बारें में बताना अभी समयोचित नहीं होगा, संदर्भ के अनुसार अवश्य विवरण करेंगें। सभी मनुष्यों को आत्मा का होना, शरीर भी उसी का, उसके साथ ही शरीर में मैं(जीव) रहता हूँ, नहीं जानते हैं। वे केवल इतना ही जानते हैं कि शरीर ही मैं हूँ, मैं ही शरीर हूँ। शरीर द्वारा हो रहे सारे कार्यों को मैंने ही किया, इस भावना के अलावा और कुछ भी

नहीं है। अब इस ग्रन्थ को मैं लिख रहा हूँ, क्योंकि मैं जीव हूँ, सोचने में कोई अवरोध नहीं। क्योंकि मैं जानता हूँ मैं कौन हूँ। इस ग्रन्थ को मैंने लिखा कहकर ग्रन्थ के रचयिता मेरा नाम रखा गया, मुझे ज्ञात है बाह्य रुप में मेरा नाम रखकर लिखनेवाली आत्मा ही है। फिर भी इस कार्य का न ही मैं खंडन करुँगा और न ही कार्य किया। इस कारण इससे पहले लिखे गए ग्रन्थों में भी कहा गया इसे मैंने नहीं लिखा, लिखनेवाला मेरा पड़ोसी आत्मा है। मैंने नहीं लिखा कहनेवाला भी मैं नहीं हूँ उस भावना को आत्मा ने ही कहलवाया और शरीर द्वारा लिखवाया। देखा न ! इतना सब जानते हुए भी मैं कभी भी कुछ न कर पानेवाला व्यक्ति ही हूँ। आपलोगों को समझ में आ सकें इस वजह रचयिता का नाम प्रबोधानन्द लिखा गया, जानिए।

यह ग्रन्थ फैसले से संबंधित ग्रन्थ है। फैसला अर्थात् गलत और सही का निर्णय कर शिक्ष(सजा) हो, या अक्ष हो अमल करने के लिए न्यायधीश द्वारा निर्णीत किया गया। बाहरी कोर्ट में फैसले और सजा होते रहते हैं। हर मनुष्य के अन्दर अप्रत्यक्ष कोर्ट, अप्रत्यक्ष वकील, अप्रत्यक्ष न्यायधीश रहते हैं। अनभिज्ञ अंतरंग के अन्दर, कोर्ट में कार्यवाही कैसी होती होगी, फैसला कैसा होता होगा सब की समझ में आ सकें हमने विवरण करने की सोची। अप्रत्यक्ष न्यायालय के बारें में विवरण बताने के लिए मुद्दई कैसा होगा, कौन मुद्दई होगा यहाँ पर थोड़ा विवरण देने की आवश्यकता है। प्रपंच संबंधित फैसले के बारें में, प्रपंच संबंधित मुजरिमों के बारें में यहाँ बताने की आवश्यकता नहीं है। प्रपंच संबंधित हत्या हो, चोरी-डकैती हो, असत्य हो, अत्याचार हो, व्यभिचार हो, हिंसा करना हो, धोखाधड़ी जैसे सारे अपराधों से संभावित सारे पापों को आत्मा आगामीकर्म के रुप में लिख रखती है। अगले काल में आगामीकर्म प्रारब्धकर्म बनकर शिक्ष(सजा) में परिगणन हो जाती है। उसके बारें में हम अभी बताना नहीं

चाहेंगे। अभी हम परमात्मा संबंधित विषयों को मात्र ही सूचित करना चाहेंगे। प्रपंच संबंधित विषय जैसे पाप और पुण्य चित्रगुप्त अर्थात् आत्मा द्वारा लिखित होकर शिक्ष(सजा) और अक्ष के रुप में अमल होते हैं। परमात्मा संबंधित विषय जैसे ज्ञान और अज्ञानता प्रकृति द्वारा पहचान में आकर लिखित होकर जन्म या मोक्ष के रुप में प्रकृति द्वारा अमल में आते हैं।

प्रपंच संबंधित कार्यों में अच्छें कार्यों के लिए पुण्य, तथा बुरें कार्यों के लिए पाप प्राप्त होता हैं। कौन से कार्य अच्छें, और कौन से कार्य बुरें हैं जानना, न्याय-अन्याय के आधार पर निश्चित होता है। कोई भी कार्य न्याय सम्मत होता है तो वह अच्छा कार्य, तथा कोई भी कार्य अन्याय सम्मत होता है तो उसे बुरा कार्य कह सकते हैं। सारे प्रपंच कार्य न्याय-अन्याय पर आधारित होते हैं, दैव संबंधित सारे कार्य ज्ञान-अज्ञान पर आधारित होते हैं। प्रपंच कार्यों में न्याय अन्याय का निर्णय करने के लिए कानून होता है। अगर कानून ही न रहे तो हर कोई अपने कार्य को न्याय ही कहेगा। इसलिए कानून बनाया गया। ज्ञानमार्ग में ज्ञान के अनुसार किसकी साधना और बोधन सही है, किसकी साधना और बोधन सही नहीं है निश्चित कर निर्णय लेनेवाला धर्म होता है। बाह्य प्रपंच में जिस प्रकार न्याय का निर्णय करने के लिए कानून होता है, उसी प्रकार से अंतरंग में ज्ञान का निर्णय करने के लिए धर्म होता है।

दैवमार्ग में अज्ञानता से आचरण करना धर्म विरुद्ध होता है जानने के लिए मनुष्य को पहले ज्ञान, और धर्म की जानकारी रहनी चाहिए। जिस सरकार ने कानून बनाया, उसी सरकार को चाहिए कि अपने कानून को सूचित करे। उसी तरह से जिस परमात्मा ने धर्म का निर्णय किया है, वही परमात्मा अपने धर्म को सूचित करेगा। अन्य कोई भी सूचित करने की गुंजाइश नहीं होती है। जिस प्रकार से सरकार का कानून सरकार ही

जानती है उसी तरह परमात्मा का धर्म परमात्मा ही जानता है। जिस प्रकार से सरकार द्वारा ही कानून पारित होता है। वैसे ही परमात्मा द्वारा ही धर्म बर्हिगत होगा। जब तक परमात्मा सूचित नहीं करेंगे उसकी जानकारी अन्य को नहीं होगी, सभी के लिए यह एक गोपनीय है। इसी विषय में भगवद् गीता में राजविद्या राजगुह्य योग अध्याय पहले श्लोक में भगवान कह रहे है कि

1 वाँ श्लोक   इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे ।
ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ।।

भावार्थ ;- यह अतिगोपनीय ज्ञान है। हर किसी के लिए अनभिज्ञ मेरा ज्ञान विज्ञान सहित विशद् रुप में कह रहा हूँ सुनो। इस ज्ञान को जानकर अर्थात् पाकर तू संसाररुप बंधन से मुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त करोगे।

परमात्मा कह रहे है कि परमात्मा का धर्म अतिगोपनीय है। यह एक अनभिज्ञ रहस्य है स्पष्ट रुप से सूचित हो रहा है। परमात्माज्ञान परमात्मा द्वारा ही सूचित होगा साक्ष्य के लिए ऊपर श्लोक देख सकते हैं। इसी विषय में क़ुरआन ग्रन्थ में आलि इम्रान 3 वाँ सुरा 7 वाँ आयत में "अल्लाह ने तुम पर यह किताब उतारी। इसकी कुछ आयतें साफ़ माना रखती हैं वह किताब की अस्ल हैं और दूसरी वह हैं जिनके माना में इश्तेबाह है, वह इश्तेबाह के पीछे पड़ते हैं गुमराही चाहने और उसका पहलू ढूंढ़ने को और उसका ठीक पहलू अल्लाह ही को मालूम है" कहा गया। अर्थात् परमात्माज्ञान, परमात्मा के अलावा अन्य कोई भी नहीं कह सकता, जब तक वे न सूचित करे किसी को मालूम न हो पाएगा। यहाँ एक और संशय उत्पन्न होने की संभावना है परमात्मा का न ही नाम है, न कार्य करता है, न ही दिखलाई देता है ऐसे में मनुष्यों को अनजान धर्मों के बारें में धरती पर कैसे सूचित करेंगे। इस प्रकार के संशयों को ग्रहण कर परमात्मा ने, पूर्व ही क़ुरआन ग्रन्थ में 42 वाँ सुरा 51 वाँ आयत में

"किसी आदमी को नहीं पहुंचता कि अल्लाह उससे कलाम फरमाए मगर "वही" के तौर पर या यूं कि वह बशर पर्दए अजमत के उधर हो या कोई फरिश्ता (दूत) भेजे कि वह उसके हूक्म से "वही" करे जो वह चाहे बेशक वह बुलन्दी व हिकमत वाला है।" अर्थात् परमात्मा प्रत्यक्ष रुप से किसी से बातें नहीं करता। वही(दिव्यवाणी) द्वारा या परदे के पीछे से या दूत(व्यक्ति) द्वारा अपने ज्ञान(धर्मों) को सूचित करवाता है। दूत(भगवान) परमात्मा के सन्देश को दुनिया तक पहुँचाता है। परमात्मा ने तीन प्रकार से आवश्यकता के अनुसार ज्ञान सूचित किया। सृष्टि बनते ही सर्वप्रथम दिव्यवाणी द्वारा अपने धर्मों को सूर्य से कहा, भगवद् गीता में कहा गया। इसी बारें में गीता में ज्ञानयोग अध्याय पहले श्लोक में बताया गया। परदे के पीछे अर्थात् कहनेवाला व्यक्ति दिखाई दिए बिना केवल बातें करता है। इसी प्रकार से मोहम्मद प्रवक्ता को जिब्राइल ने बिना दिखलाई दिए बताया। परमात्मा द्वारा भेजे दूत थे श्री कृष्ण जी सुलभता से कह सकते हैं। कृष्ण को, क़ुरआन के अनुसार अल्लाह द्वारा भेजा व्यक्ति, तथा हमारे हिसाब से भगवान का रुप कह सकते हैं।

इस प्रकार परमात्मा ने कहीं भी किसी से भी प्रत्यक्ष रुप से बातें नहीं की, अपने धर्मों को अब तक तीन प्रकार से, तीन प्रान्तों में, तीन युगों मे सूचित किया। कृतयुग के आरम्भ में अर्थात् सृष्टि के आदि में ध्वनि रुप में कहा। द्वापरयुग के अंत में भगवान के रुप में या ईश्वर द्वारा भेजा गया व्यक्ति के रुप में श्री कृष्ण आए थे। कलियुग में जिब्राईल ने अदृश्य रुप में मोहम्मद प्रवक्ता जी को परमात्मा ज्ञान बतलाया था। अबतक तीन प्रकार से तीन समयों में सूचित हुए ज्ञान तीन ग्रन्थों के रुप में हैं। ज्ञान तीन ग्रन्थों में होने के बावजुद किसी भी मनुष्य को समझ में नहीं आ आया। इसलिए तीनों ग्रन्थों के ज्ञान का विवरण बताने के लिए भगवान एक बार फिर आनेवाले हैं।

परमात्मा ने मनुष्य की जानकारी के लिए अपने धर्मों को ज्ञान के रुप में बताया, किन्तु वह ज्ञान तीन मजहबों का रुप लिया। ज्ञान ने मजहब का रुप नहीं लिया, इन्सानों ने उसे मजहब का रुप दे डाला। परमात्मा ने अपने ज्ञान को धर्मों के रुप में कहा था, मजहब के रुप में नहीं। इन्सान ने परमात्मा के बताए ज्ञान को अपने स्वार्थ के लिए मजहबों में बदल डाला। मनुष्य परमात्मा ज्ञान के आड़ में अपने मजहब को बड़ा बनाने की कोशिश में लगा हुआ है। मजहबों को बड़ा बताने की कोशिश में परमात्माज्ञान का उपयोग करते हुए परमात्माज्ञान को नीचा दिखा रहा है। और इतना ही नहीं, परमात्मा द्वारा दिया गया ग्रन्थ को अपना मजहबी ग्रन्थ बता रहा है। परमात्मा ज्ञान का उपयोग करने से वें जन्मों से मुक्त नहीं हो पायेंगें, तथा ईश्वर के ग्रन्थ को अपने मत(धर्म) का ग्रन्थ कहने की वजह से, परमात्मा की दृष्टि में दोषी कहलायेंगे।

हर मत(धर्म) में उस मत(धर्म) के बोधकों का कहना है कि हम दैवज्ञान बता रहे हैं, जबकि उन्हें वास्तविक भाव मालूम न होने के कारण, अपनी इच्छा के अनुकूल कहना आरम्भ किया। गलत भाव बताने की वजह से उनके बोधन को सुनकर लोगों ने उस बोधन को सत्य माना, और उन बोधकों के कहे अनुसार आचरन करने के कारण कहनेवाले, सुननेवाले दोनों परमात्मा मार्ग में दोषी हो रहे हैं। ऐसे लोगों पर न्यायालय में, कार्यवाही होगी और शिक्ष(सजा) निश्चित है। गुरुओं ने जो बोध किया उसे हमलोगों ने सुना, इसमें हमारी क्या गलती है यदि कोई ऐसा कहे, वह व्यक्ति शिक्षा(सजा) से बच नहीं सकता। दैवमार्ग के बारें में न जाननेवाले, दैवमार्ग में न आनेवालों को, प्रकृति संबंधित पापों की शिक्ष(सजा) मिलती है, दैव संबंध शिक्ष(सजा) उन्हे नहीं मिलेगी। हम दैवमार्ग का अनुसरण कर रहे हैं कहते हुए शिष्य बनकर, या गुरुओं के रुप में रहें, या स्वामीजन के रुप में रहें, या कोई किसी भी रुप में हो वे परमात्मा की दृष्टि में अपराधी हैं, और उन पर कार्यवाही अवश्य होगी।

हमारी बातों को सुनकर कुछ लोग या अन्य मतों(धर्मों) के सारे लोग हो हमारे बातों को विरोध करते हुए "हम दोषी कैसे हो सकते हैं ? हमलोगों ने अपने ग्रन्थों का अच्छी तरह से अध्ययन कर समझा है, और हम परमात्मा मार्ग में ही चल रहे हैं। परमात्मा कहे अनुसार परमात्मा की आराधना कर रहे हैं, अन्य राह में भटकनहीं रहे हैं। हर प्रकार से परमात्मा के कहे अनुसार अनुसरण करनेवाले हमें, दोषी कहना, तथा शिक्ष(सजा) का हकदार कहना क्या सामंजस्य है" प्रश्न कर सकते हैं। इसका उत्तर कुछ इस प्रकार से है। दैव मार्ग पर चलनेवाले, तथा परमात्मा ज्ञान का अनुसरण करनेवालों के बारें में मैं बातें नहीं कर रहा। परमात्मा ज्ञान बताते हुए अपने मत(धर्म)के मोह में पड़े लोगों के बारें में बातें कर रहा हूँ। कद्दू चोर बोलने से सब को चौंकने की जरुरत नहीं है। जो लोग कहते हैं कि हमारा मत(धर्म)अलग है, आपका धर्म अलग है, हमारा ईश्वर अलग है, आपका ईश्वर है, हमारा ग्रन्थ अलग है, आपका ग्रन्थ अलग है उनलोगों के बारें में कह रहा हूँ।

सारी सृष्टि के अधिपति ईश्वर है तो फिर आपका ईश्वर हमारा ईश्वर कहना गलत होगा न ! हिन्दूओं के भगवान श्रीकृष्ण के प्रति ईसाई अवहेलना का भाव रखते हैं। हिन्दू यीशु प्रभु के प्रति निरादर भाव रखते हैं। मुस्लिम कहते हैं कि हम ही सही मार्ग पर चल रहे हैं, जो कोई भी हमारे मजहब की लड़की से निकाह करना चाहता है उसे हमारे मजहब को स्वीकार करना होगा। अपने -आप को महाज्ञानी माननेवाला व्यक्ति, क्या वे मत(धर्म) के रोग से दूर है ? अपने सीने पर हाथ रखकर बोलिए। तीन मूल ग्रन्थ भगवद् गीता, बाइबल, कुरआन में बताया गया ज्ञान का भाव एक ही है, तीनों ग्रन्थ तीन समयों में तीन प्रान्तों के लोगों को दिया गया, तीनों ग्रन्थों में एक ही परमात्मा का ज्ञान बताया गया है, कोई कुछ भी कहें सभी मनुष्यों के लिए एक ही परमात्मा है। हमने कहा, ज्ञान मत(धर्म) से परे होता है, किन्तु मुस्लिम और ईसाईयों का कहना है कि

हमारा ज्ञान हम जानते हैं आप नहीं जानते है। हिन्दूओं ने हम पर आरोप लगाया कि हम ईसाई मत(धर्म) बोधन करते हैं। मत से परे का ज्ञान बताने के कारण हमने हिन्दू, मुस्लिम, ईसाईयों से अनेक समस्याओं का सामना किया। और हम पर कई हमलें भी हुए। ऐसे अनुभवों के आधार पर बताइए किसे मत(धर्म) से प्यार है किसे नहीं ? सब मत(धर्म) के नशे में मस्त हैं। परमात्मा ने मत(धर्म) नहीं बनाया। जिसने मत(धर्म) बनाया वह परमात्मा की दृष्टि में अपराधी है। सभी मतों(धर्मों) के लोगों का कहना है कि हम भक्ति करते हैं, ज्ञानी हैं वे इस बात से अनजान हैं कि वे अनजाने में ही ईश्वर के विरुद्ध व्यवहार कर रहे हैं।

धरती पर मनुष्यों के लिए ईश्वर ने तीन विधानों से ज्ञान सूचित किया। सृष्टि के आदि में दिव्यवाणी द्वारा एकबार बताया। परदे के पीछे में रहकर ज्ञानी ने मोहम्मद प्रवक्ता तथा कई लोगों को बोध किया। अपने भेजे दूत अर्थात् अपने अंश से भेजे दूत द्वारा द्वापरयुग में एकबार तथा गत में कई बार बोध करवाया गया। उसके बाद आनेवाले समयों में जब धर्म खतरें में पड़ने लगेगा, और जब अधर्म की वृद्धि होने लगेगी, वापस उसी प्रकार से बताऊँगा, कहा था। द्वापरयुग के बाद भी परमात्मा के पास से भेजे दूत आए और चले गए इसके कई आधार भी पाए गए। इस प्रकार से परमात्मा ने अपने धर्मों को सूचित करने के लिए अनेक बार प्रयत्न किए, मनुष्य ने परमात्मा ज्ञान का भाव गलत समझ कर परमात्मा के विरुद्ध में बोध करने लगा, तथा परमात्मा की आराधना न कर, अपनी इच्छानुसार आराधना करना परमात्मा के धर्मों के प्रति अपराधी कहलाते हैं न! क्या वे शिक्ष(सजा) के हकदार नहीं हैं ? प्रश्न पुछ रहा हूँ।

मनुष्यों ने मतों(धर्मों) को बनाया, जहाँ तक मैं जानता हूँ तीनों मतों(धर्मों) के लोगों के लिए परमात्मा ने ज्ञान युक्त तीन ग्रन्थों की व्यवस्था कर रखी है। उन ग्रन्थों में से एक ग्रन्थ में एक ग्रह जो महाज्ञानी

थे अव्यक्त रुप में उन्होंने परमात्मा ज्ञान बोधन किया। दोनों ग्रन्थों में परमात्मा के पास से भेजा हुआ दूत(परमात्मा अंश से बनकर आया भगवान) द्वारा ज्ञान बताया गया। भविष्य में कोई भी कह न सके कि परमात्मा ने हमें अपना ज्ञान सूचित नहीं किया, इसलिए पहले ही अपने ज्ञान को बोध कर और साक्ष्य के रुप में अपने ज्ञान को ग्रन्थ के रुप में दिया।

कोई भी अनभिक्ष विषय जब हम सब के मध्य आती है, उसमें वास्तविकता को जानने के लिए, उसमें किसी असत्य बात की जानकारी के लिए, उससे संबंधित शास्त्र को आधार मानकर ज्ञात करना पड़ता है। जैसे कि जल में कितने रस होते हैं ? या वायु कितने हैं ?जानने के लिए उससे संबंधित रसायन शास्त्र का अध्ययन करते हैं। या गणित के प्रश्न सही है या नहीं जानने के लिए गणित शास्त्र को आधार मानकर हल करते हैं। या मनुष्य के शरीर के अन्दर कलेजे का विवरण जानना हो तो भौतिकशास्त्र को आधार लेकर देखते हैं। इस प्रकार से प्रपंच विषयों में, प्रपंच ज्ञान की जानकारी करने के लिए पाँच शास्त्र हैं। उनके नाम 1) गणित शास्त्र 2) खगोल शास्त्र 3) रसायन शास्त्र 4) भौतिक शास्त्र 5) ज्योतिष शास्त्र। प्रकृति या प्रपंच से संबंधित विषय इन पाँच शास्त्रों में हैं, प्रकृति का सृजनहार परमात्मा के बारें में सत्य-असत्य का निर्धारण करने हेतु ब्रम्हविद्या शास्त्र को प्रमाण के लिए लेना पड़ता है।मनुष्य को, परमात्मा विषयों की जानकारी करने हेतु परमात्मा ग्रन्थ को आधार मानना पड़ता है। भगवद् गीता(दैव शास्त्र, ब्रम्हविद्या शास्त्र), बाइबल, क़ुरआन में वर्णन किया गया है। दैव विषयों को निर्धारण करने हेतु हिन्दूओं को भगवद् गीता में, ईसाईयों को बाइबल में, तथा मुस्लिमों को क़ुरआन ग्रन्थ में देखना पड़ता है।

यहाँ एक विषय ग्रहण करें यदि एक मुस्लिम से पुछा जाय कि आपका दैव ग्रन्थ कौन सा है, तुरन्त उत्तर मिलेगा क़ुरआन, ईसाई से प्रश्न

करें तो बाइबल कहेगा। 25 वर्षीय हिन्दू युवक जो M.B.A का छात्र है उससे आपका दैव ग्रन्थ कौन सा है पुछा गया, उत्तर में मुझे नहीं मालूम कहा। दूसरे से पुछा तो उसने रामायण कहा। आपका परमात्मा कौन है पुछा तो उसने उत्तर में राम कहा। पाँच वर्षीय ईसाई बालक हो, या मुस्लिम बालक हो उससे प्रश्न किया जाय तो बड़ी ही सुलभता से उत्तर देगा। लेकिन 25 वर्षीय एक हिन्दू युवक से पुछने पर, कोई कहता है मुझे मालुम नहीं, कोई रामायण कहता है, कोई वेदों का नाम लेता है, कोई उपनिषद् कहता है ऐसे अनेक प्रकार से उत्तर देते रहते हैं। दस में से एक व्यक्ति ने भी नहीं कहा कि हमारा ग्रन्थ भगवद् गीता है। भारतवर्ष हिन्दूओं का देश है, आज 50 लाख लोग सन्यासी हैं, दस हजार से भी अधिक बोध करनेवाले स्वामीगण हैं फिर भी, दस में से एक व्यक्ति भी नहीं जान पाया कि हिन्दूओं का ग्रंथ भगवद् गीता है कितनी आश्चर्य की बात है। एक और आश्चर्यजनक विषय यह है कि हिन्दूओं में से मात्र पाँच प्रतिशत लोगों ने ही भगवद् गीता का अध्ययन किया, 95 प्रतिशत लोगों ने पढ़ा ही नहीं। नीचे विवरण कुछ इस प्रकार से हैं।

भगवद् गीता के बारें में जरा भी न जाननेवाले लोग सौ में से 80 हिन्दू हैं।
भगवद् गीता के बारें में सुनकर भी नहीं देखनेवाले लोग सौ में से 10 हिन्दू हैं।
भगवद् गीता को देखकर भी उसका अध्ययन नहीं करनेवाले लोग सौ में से 5 हिन्दू हैं।
भगवद् गीता को देखकर उसका अध्ययन करनेवाले लोग सौ में से 5 मात्र ही हैं।

भारतवर्ष में हिन्दूओं की संख्या पहले की अपेक्षा आज घट गई है, ईसाईयों की संख्या तेजी से, मुस्लिमों की संख्या धीमी गति से बढ़ रही है। इन दिनों हिन्दू अपने मत(धर्म) की रक्षा करने हेतु अनेक संघ अनेकों नाम से बनाए गए। हिन्दू मत(धर्म) का अर्थ ही न जाननेवाले लोग

हिन्दू रक्षा नाम रखा, जैसे एक अन्धा साँप अपने ही बच्चों को खाने की तरह है। हिन्दू (इन्दू) धर्मों का बोधन करनेवाले हमें दूसरे मत(धर्म) का व्यक्ति बताया जा रहा है। ईसाईयों, और मुस्लिमों से धर्मों के बारें में प्रश्न करने की योग्यता रखनेवाले हम, धर्म ज्ञान से अनजान हिन्दू हमारी अवहेलना कर रहे हैं। मत(धर्म) के नाम से कुछ हिन्दूओं का दल बना और राजनिति में आगे बढ़ रहे हैं, और दैवत्व विधान को प्रपंच से संबंधित राजनीति में उपयोग कर रहे हैं। यह भी परमात्मा विधान में अपराध है।

किसी भी मत(धर्म) में परमात्मा विधान जानने के लिए, रुकावट न आ सके, उनके किये गए कार्यों में गलत और सही को सूचित करने के लिए, ब्रम्हविद्या शास्त्र को परमात्मा ने उनके अपने मत(धर्म) में ही ग्रन्थ दिया। दैवज्ञान का नाम लेकर मनुष्य अपनी इच्छानुसार अपने भावों को न कह सके, रोकने के लिए यह शास्त्र चेकपोस्ट की तरह है। दूध मे पानी की मिलावट होती है, स्वच्छ दैवज्ञान में मनुष्य अपने स्वार्थ ज्ञान की मिलावट करता है, जिस प्रकार से दूध में पानी की मात्रा जानने के लिए यंत्र का उपयोग किया जाता है, उसी तरह से ब्रम्हविद्याशास्त्र, दैवज्ञान में मिलावट मनुष्य के ज्ञान को दर्शाता है। कहीं भी, कभी भी मनुष्य किसी बड़े स्वामजी के पास जाकर ज्ञान सुनता हो तो उसे चाहिए कि ज्ञान में शास्त्रबद्धता है या नहीं ग्रहण करे, और फिर अशास्त्रीय विषयों को पृथक कर दें, कह रहे हैं। किन-किन मतों(धर्मों) में कौन-कौन अशास्त्रीय पद्धति से अपने ज्ञान को बता रहे हैं, किस प्रकार के लोग परमात्मा की अदालत में दोषी के रुप में, शिक्ष(सजा) के योग्य हैं, उनके ज्ञान के अनुसार देखेंगे। मैं किसी के समझ में आऊँ या न आऊँ मैं शुद्ध इन्दू हूँ। मैंने स्वयं ही खुद को एक उपाधि दी, "**इन्दू धर्म प्रदाता**"। शास्त्रीय इन्दू धर्मों में (दैवज्ञान धर्मों में) पहले इन्दू (हिन्दू) मत(धर्म) की कमीयों के बारें में चर्चा करते हैं।

कल की ही बात है 19-03-2013 मंगलवार जम्मूल मड्डुगु के पास वद्दीराल गाँव के एक निवासी ने हमारे प्रबोधाश्रम में आया और हमारे भक्तों से दैवज्ञान के बारें में बहस कर लौट गया। उनका कहना था, आप कहते हैं परमात्मा को अबतक किसी ने नहीं देखा, और न ही कोई देख नहीं सकता है। आपने जो कहा बिलकुल असत्य है, क्योंकि परमात्मा को अनेक लोगों ने देखा है। रामकृष्ण परमाहंस ने "मैंने परमात्मा को देखा है" कहा था। उनके अलावा अनेक लोगों ने भी कहा हमने देखा है। लेकिन आप क्यों कह रहे हैं कि किसी ने नहीं देखा। ऐसा सुनकर हमारे लोगों ने उन्हे विस्तार से बताने का प्रयत्न कर रहे थें कि, उसने बीच में ही बात काट कर मुझे समस्त ज्ञान मालूम है, आप मुझे कुछ भी बताने की आवश्यकता नहीं है, कहा। हमलोगों ने सोचा कि वे ज्ञान जानते है और बातें बता रहे है, इसलिए उनके ज्ञान को हमलोगों ने ध्यान से सुना, और वह ज्ञान सही है या नहीं हमलोगों को जानने की आवश्यकता है। जिस प्रकार से, दूध में पानी की मात्रा कितनी है जानने के लिए, दूध की शुद्धता का परिमाण मापने का यंत्र(lactometer) द्वारा जाँच कर मालूम किया जाता है, उसी तरह से ब्रम्हविद्या शास्त्र को आधार मानकर, मनुष्यों को परमात्मा नजर आता है या नहीं जानने की आवश्यकता है।

हमने ईश्वर को देखा है कहनेवाले इस्लाम को छोड़कर ईसाईयों में तथा हिन्दूओं में कहीं-कहीं हैं। रामकृष्ण परमाहंस से विवेकानंद जब पहली बार मिले थे, उन्होंने पुछा "तुम ने ईश्वर को देखा है? मुझे दिखा सकोगे"। और तब रामकृष्ण परमाहंस ने "मैंने देखा है तुम्हे भी दिखला सकता हूँ" कहा। मैंने देखा है तुम्हे भी दिखला सकता हूँ, कहने की वजह से विवेकानन्द ने गुरु का अन्वेषण त्यागकर परमाहंस के शिष्य बन गए। यह विषय "स्वामी विवेकानन्द प्रमाणिक समग्र जीवनी" ग्रन्थ में 84 पन्ने में इस प्रकार से है।

विवेकानन्द : महाशय, आपने ईश्वर को आँखों से देखा है?
रामकृष्ण : हाँ देखा है। जिस तरह से तुम्हे स्पष्ट रुप से देख रहा हूँ, बातें कर रहा हूँ, वैसे
ही स्पष्ट रुप से देख सकते हैं, बातें कर सकते हैं।

उसी पन्ने में नीचे पैरा में विवेकानन्द जी के बातों पर गौर करते हैं, "थोड़ी देर पहले उनकी बातें और अभी उनका वर्ताव विपरीत नजर आया। कई समयों में स्पष्ट रुप में, कई समयों में सनकी की तरह रहते थे, संभवत; आधे पागल होगें।" इस प्रकार से विवेकानन्द ने परमाहंस के बारें में कई बार सोचा। ईश्वर को मैं दिखाऊँगा कहनेवाले रामकृष्ण परमाहंस ने नहीं दिखलाया। समय गुजरता गया रामकृष्ण परमाहंस बीमार पड़ गए। उनके अंत समय में स्वामी विवेकानन्द का सब्र का बाँध टुटा और कुछ इस प्रकार से पुछा। इसी ग्रन्थ के 172 पन्ने में देख सकते हैं।

नरेन्द्र : ईश्वर वगैरह कुछ भी नहीं है। देखो मैं इस वृक्ष को देख रहा हूँ। इसी प्रकार से किसी
ने भी ईश्वर को देखा है?
"म" : क्यों, गुरुदेव ने देखा है न!
नरेन्द्र : यह उनका मनोभ्रम हो सकता है।

उसके बाद थोड़े दिनों में उनकी मृत्यु हो गयी। रामकृष्ण परमाहंस के अस्थि कलश को, जिस कमरे में उनका फोटो रखा था वहाँ रखकर उनके शिष्य पूजा करना चाहते थे। उनकी पूजा आरम्भ होते ही पूजा मन्दिर में खड़े होकर विवेकानन्द विरोध करने लगे। दूसरे शिष्य स्वामी रामकृष्णनन्द ने युक्तिपूर्वक उत्तर दिया। बहस बढ़ती गयी। और आखिर में स्वामी रामकृष्णानन्द जी ने स्वामी जी के बालों को पकड़ कर, घसीटते हुए उन्हे बाहर निकाला।

देखा न, विवेकानन्द रामकृष्ण परमाहंस जी की आराधना किया करते थे, परमाहंस जी उन्हे ईश्वर के दर्शन कराए बिना मृत्यु को प्राप्त हो गए इस वजह से उन्होंने ऐसा वर्ताव किया, समझ सकते हैं। विवेकानन्द समझ गए कि ईश्वर दिखाई दे सकता है कहना असत्य है। एक भक्त ने निराश होकर, मुझे ईश्वर के दर्शन नहीं हुए है मेरा जीवन वृथा है कहा। पास में ही खड़े विवेकानन्द ने कहा , "देखो तेरे पास में एक चाकू पड़ा हुआ है उसे लेकर खुद को भोंक लो" अवहेलना करते हुए कहा। इस प्रकार की बातें यह सिद्ध करती है कि ईश्वर को कोई भी देख नहीं सकता है।

यह पूरी यथार्थ में घटित हुई घटना है, स्पष्ट है कि परमाहंस ने विवेकानन्द को ईश्वर के दर्शन नहीं करवाए, रामकृष्ण परमाहंस ने ईश्वर के दर्शन किए है कहना, कोई भी ज्ञान को जाननेवाला क्या ऐसी बातें कर सकता है ? मैंने देखा है परमाहंस जी ने कहा विवेकानन्द ने परमाहंस जी को सनकी समझा। वद्दीराल से आए व्यक्ति को भी मतिहीन ही कहा जाएगा। मुँह में जो आया कह दिया ईश्वर के ज्ञान को अशास्त्रीय रुप से बताने से, ईश्वर के विरुद्ध ही कहा जाएगा, और दंड के हकदार बनेंगे। घमंड़ में चूर हो कर दैवज्ञान के विरुद्ध में कुछ भी कहने से, जब शिक्ष(सजा) अमल में आयेगा सारा घमंड़ चूर-चूर होकर, मैंने यह पाप क्यों किया रोना पड़ सकता है, सावधान।

ब्रम्हविद्या शास्त्रबद्धता से ईश्वर न किसी को नजर आता है न ही बात करता है भगवद् गीता में, क़ुरआन में, बाइबल ग्रन्थों में आधार मिलेंगें। उसके बारें में अभी जानेंगें। भगवद् गीता विज्ञान योग अध्याय में

24 वाँ श्लोक अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धय; ।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम् ।।

25 वाँ श्लोक नाहं प्रकाश; सर्वस्य योगमायासमावृत; ।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम् ।।

26 वाँ श्लोक वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन ।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन ।।

भावार्थ :- सबसे उत्तम, नाशरहित परमात्मास्वरुप को न जाननेवाले बुद्धिहीन मनुष्य, किसी को नजर न आनेवाला मुझको देखा है कहते हैं। योगमाया से आच्छादित हुआ मुझको देखने के लिए किसी भी मनुष्य के वश में नहीं है। अज्ञान मनुष्य मुझ जन्मरहित, अविनाशी परमात्मा को नहीं जानता। इस जगत् में सर्व प्राणीसमुदाय को जो हो रहे वर्तमानकाल हैं, एवं जो पूर्व हो चुके हैं और जो भविष्य में होनेवाले हैं उन सब भूतों को मैं जानता हूँ। त्रिकाल को जाननेवाला मैं कैसा हूँ कोई नहीं जानता।

राजविद्या राजगुह्य योग अध्याय में चौथे श्लोक का एक वाक्य। "मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना।" इसका भाव है "मैं इन्द्रियों के लिए अगोचर हूँ, इस समस्त प्रपंच में व्याप्त हूँ।"ये पूरी बातें भगवान ने स्वयं कही। ये सारी बातें ब्रम्हविद्या शास्त्र से संबंधित हैं इस वजह उसी का अनुसरण कर रहे हैं। मैं हर इन्द्रियों के लिए अगोचर हूँ, मुझको कोई नहीं देख सकता ऐसा ईश्वर की कही बातों का अतिक्रमण कर, मैंने देखा है अगर कोई कहे तो, वह व्यक्ति अशास्त्रीय रुप में ईश्वर के धर्मों के विरुद्ध बातें करता है। ईश्वर की बातों को नकारनेवाला उनका, और उनके ज्ञान का दूषक है। दैवदूषण पाप का हकदार होगा। ईश्वर को मैंने देखा है , मैंने बातें की है कहनेवाला स्वामीजन हो, या कोई भी हो, दैवमार्ग में अपराधी ही होंगें, और शिक्ष(सजा) के हकदार होंगें।

ईश्वर को किसी ने नहीं देखा, ईश्वर किसी से भी प्रत्यक्ष रुप में बातें नहीं करता क़ुरआन ग्रन्थ में सुरा 6, आयत 103 में इस प्रकार से है, "आँखें उसे(अल्लाह) इहाता नहीं करती (अल्लाह को कोई देख नहीं

सकता) और सब आखें उनकी इहाता में हैं। (अल्लाह) सबको देख सकता है।)" अल्लाह सूक्ष्म दृष्टि युक्त , समस्त जानता है। इस वाक्य में ईश्वर को कोई नहीं देख सकता, परन्तु ईश्वर सबको देख सकता, दिया गया है। और 42 सुरा में 51 आयत में भी इसी प्रकार से है, "किसी भी इन्सान से प्रत्यक्ष रुप में बातें करना असंभव है।" इस प्रकार से ईश्वर ने अपने ग्रन्थों में कहा, उनकी(ईश्वर) बातों को नकार कर, हमने देखा है, हमने बातें की है कहा गया। उन्होंने किसे देखा है ? किससे बातें कीं है ? वे ही जानें। उन्होंने जो भी देखा वो ईश्वर नहीं हो सकता ऐसा ब्रम्हविद्या शास्त्र कह रही है। एक गुरु ने, आप सब को ईश्वर के दर्शन करवाऊँगा, फलाँ दिन उनके पास आने के लिए शिष्यों से कहा। ईश्वर के दर्शन करने के लिए उस दिन सारे शिष्य आसक्ति से गुरु के पास गए। गुरु ने कहा "मैं ईश्वर के दर्शन करवा रहा हूँ चौकन्ने रह कर देखिए, शिष्य चौकन्नें होकर पूरी याद में देखने की कोशिश कर रहे थें, मध्य में शून्य खुला दिखलाते हुए यही ईश्वर का आकार है, जिसे कोई नहीं देख सकता, आप सब देख रहे हो, कहा। और तब एक शिष्य ने इस खुले को प्रतिदिन हम देखते रहते है। हम ही नहीं बल्कि हमारे साथ-साथ कुत्तें, हमारे घर में रह रहे बिल्लियाँ भी देखती रहती हैं, कहा। गुरुजी ने, खुला ही ईश्वर है, अबतक आपलोगों को मालूम नहीं था न ! कहा। कुछ लोगों ने उनकी बातों पर अन्धा-विश्वास किया। किन्तु कुछ लोगों ने प्रकृति को दिखलाकर ईश्वर कह रहे है, प्रकृति को बनानेवाला ईश्वर है, प्रकृति नजर आती है, ईश्वर नजर नहीं आता है शायद इन्हे मालूम नहीं होगा, सोच रहे थे। उसके बाद उस गुरु का त्यागकर यथार्थज्ञान के अन्वेषण में चल पड़ें।

आज के जमाने में आध्यात्मिकता का नाम तो है, किन्तु उसमें न आत्मा है, न अध्ययन है। आप सब समझ सकें एक उदाहरण बता रहे हैं। मैं जब बहुत छोटा था लोग पैसे कमाने के लिए घर-घर घुम कर भविष्य बताया करते थे। कुछ औरतें सिर पर टोकरी रखकर "भविष्य बताऊँगी"

कहते हुए पूरे गाँव में घुमा करती थीं। गाँव में एक या कुछ लोग ही उनसे भविष्य जाना करते थे। भविष्य बतानेवाले, जाननेवाले के हाथों को पकड़कर देवताओं का नाम लेते हुए गाने के रुप में उन्हें जो सुझता था, कहती रहती थीं। इसे ही भविष्य कहा जाता है। भविष्य का अर्थ होता है ज्ञान। यहाँ पर भविष्य शब्द का उपयोग करना उचित नहीं होगा। परन्तु, पूर्व ऐसा ही कहा करते थें। पूर्व जो व्यक्ति याद में रहते थे, याद बताना एक प्रकार से भविष्य ही था, छोटे से पिंजड़े में तोता रखकर पूरे गाँव में घूमकर भविष्य बतानेवालों को हमने देखा है। और एक पुस्तक के अन्दर एक तीली को रखकर, जो पन्ना खुलता था उसमें लिखें विषयों को पढ़ना, मैं देखा करता था। यह भी एक प्रकार ज्योतिष ही है। और भी कुछ लोग हैं जो कौड़ीयों को जमीन पर डालकर उसमें से कितने पेट के बल गिरें, कितने पीठ के बल गिरें उसे देखकर उससे ज्योतिष बताते हुए लोगों को हमने देखा है। कई लोग पंचांग देखकर भविष्य बताते हैं। कई लोग संख्या शास्त्र का नाम रखकर मनुष्य के नाम के अक्षरों के अनुसार ज्योतिष बताते हैं। इस प्रकार से समाज में ऐसे कई प्रकार के ज्योतिष प्रबल हो गए हैं। इनमें शास्त्रीयता किसी एक ही में है जो असली ज्योतिष है। जिसमें अशास्त्रीयता होती है वह ज्योतिष नहीं होता, कह सकते हैं। अशास्त्रीय ज्योतिष केवल नाम का ही ज्योतिष होता है, उसमें सत्यता जरा भी नहीं होती है। इन सब को अंध-विश्वास से भरा कह सकते हैं।

इसी प्रकार से आध्यात्मिकता को अनेक प्रकार से दुनिया को बोध किया जा रहा है। जिस प्रकार से ज्योतिष, तीली ज्योतिष, कौड़ी ज्योतिष, तोता ज्योतिष ऐसे अनेक प्रकार के ज्योतिष अशास्त्रीय रुप से व्याप्त हैं, उसी प्रकार से आज दुनिया को अनेक पद्धियों से आध्यात्मिकता बताई जा रही है। जिस प्रकार से अनेक प्रकार के ज्योतिषगण हैं, उसी तरह से अनेक प्रकार के आध्यात्मिक बोधक भी हैं। जितने भी ज्योतिष हैं उसमें न ही शास्त्रबद्धता है न ही सत्यता है, वैसे ही अनेक प्रकार आध्यात्मिक

बोधकों में शास्त्रीयता नहीं रही। ज्योतिष दस, पन्द्रह प्रकार के होंगें, किन्तु आध्यात्मिकता करीब-करीब दो सौ, तीन सौ प्रकार के हैं, कह सकते हैं। सैंकड़ों प्रकार में पूर्ण शास्त्रीयता को दीपक लेकर ढुंढने पर भी नहीं मिल पाएगा। इसके बावजुद मनुष्य बोधकों के पीछे पड़ा ही रहता है। इस प्रकार से आध्यात्मिकता राह भटक रही है। इतने सारे बोधकों में कोई कहता है मेरा बोध सच्चा है, कोई कहता है मेरा बोध सच्चा है। इस प्रकार से मैं महान हूँ, मेरा बताया गया बोध महान कहते हुए सारे बोधकगण देश में पैसों के लिए, नाम और ख्याति पाने हेतु तत्पर हैं, परमात्मा ज्ञान हेतु निम्न मात्र भी किसी ने प्रयत्न नहीं किया, समझ में आता है। कुछ लोगों ने आध्यात्मिक बोध को एक व्यापार बना लिया है। आध्यात्मिकता पवित्र, शक्ति युक्त है इसे बोधक समझ नहीं पा रहे हैं। यह सब मैं अपने अनुभव पूर्वक बतला रहा हूँ। अपने अनुभव को नीचे लिख रहा हूँ।

लगभग तीस साल पहले की बात है मैं कर्नूल जिला में एक स्वामी जी से मिला था। मैंने अपना परिचय एक साधारण व्यक्ति के रुप में दिया। उन दिनों वे अच्छा प्रवचन दिया करते थे, और काफी नाम भी कमाया। उनके नाम को थोड़ा बदलकर कहें, तो प्रनाध चैतन्य स्वामी। उन दिनों सारे हिन्दू रक्षा संघ उनकी प्रशंसा किया करते थे। क्योंकि स्वामीजी हिन्दूमत(धर्म) के बारें में प्रशंसा करते हुए इस्लाम तथा ईसाई मत(धर्म) का दूषण किया करते थे, आलोचना किया करते थे। उन दिनों धैर्यपूर्वक हर बात कहनेवाला स्वामी कहकर अनेक लोग उनकी प्रशंसा किया करते थे। मैंने उस स्वामी के पास पूरा दिन बिताया। रात्रि भोजन के पश्चात् 8 बजे से 2 बजे तक अर्थात् 6 घन्टें बातें करते रहें। मैं कई प्रश्न पुछता रहा। उन्होंने पुराण, इतिहास, कभी-कभी भगवद् गीता, उपनिषदों के आधार से उत्तर दे रहे थे। बताते हुए कई विषयों को पहले एक तरह से बताया, उसे ही बाद में दूसरी तरह से बताना पड़ा। पहले उन्होंने हाँ में उत्तर दिया फिर उन्हें संदर्भानुसार न कहना पड़ा। अंतत; वे समझ में

गए कि उन्होंने एक विषय में दो तरह से बातें की। यही विषय मैंने उनसे पुछा, उस समय में आपने वैसा कहा था अब ऐसा कह रहे हैं। उनका उत्तर हमें आश्चर्यचकित कर दिया। जो इस प्रकार से है ! "कुछ जगहों में ऐसा बोलना पड़ता है। इस तरह से बातें करने से जनता खुश होती है, ऐसे बातें न करें तो उन्हें हम पसन्द नहीं आयेंगें,"कहा। और तब मैंने" प्रपंच विषय में जैसे भी बदलकर बातें करें कोई परवाह नही है। परन्तु परमात्मा विषय में शास्त्रबद्धता हमेशा एक जैसा ही होता है। एक विषय में दो तरह से बातें बताना, परमात्मा ज्ञान का उपेक्षा करना हुआ न ! "पुछा। जवाब में उन्होंने" मैं बिना कुछ छुपाए सच्ची बात बताना चाहता हूँ सुनो। सच बताऊँ, कोई ईश्वर नहीं है। इस विषय में और अधिक बातें करना व्यर्थ है" हँसते हुए जवाब दिया। उस समय तो मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ और मैंने पुछा, आप इस समाज में ख्याति प्राप्त स्वामी हैं। कई गाँवों में बड़े-बड़े सभाओं में सप्ताह भर प्रवचन देकर अच्छा नाम कमा रहे हैं। परमात्मा के बारें में, परमात्माज्ञान के बारें में कई उदाहरण देकर बोध किया जिसे सुनकर मुर्ख भी समझने लगें हैं। ऐसे में आप कहते हैं परमात्मा नहीं है, मुझे आश्चर्य हो रहा है। जब आप को लगता है कि ईश्वर नहीं है, तो फिर आप काशाय वस्त्र धारण कर स्वामी जी बनकर वैसा बोधन क्यों कर रहे है ?

और तब उन्होंने मुझे एक और आश्चर्यजनक विषय कोमलता से बिना झिझके इस प्रकार से कहा। "मैंने लोगों के लिए बताया। अपने लिए नहीं। ईश्वर है मुझे विश्वास नहीं, लोगों को ईश्वर पर विश्वास है, इसलिए उनके लिए मैंने बताया। एक सप्ताह के लिए एक लाख रुपए देकर, उन लोगों ने कहा, हम लोगों को परमात्मा ज्ञान के बारें में प्रवचन दीजिए। हमने पैसे लिए, इसलिए मुझे कहना पड़ा। उन्हें प्रवचन चाहिए था, और मुझे पैसे। मुझे मालूम है ईश्वर नहीं है, फिर भी ईश्वर है बताना आवश्यक था। इसलिए वे जैसा चाहते थे उसी प्रकार से मैंने बताया।

सिनेमा में राम या कृष्ण की भूमिका निभानेवाला कलाकार अभिनय करता है। वास्तव में न वह राम है, न ही कृष्ण है। अभिनय करने के लिए वह कुछ पैसे लेता है। राम या कृष्ण की भूमिका अदा करने के लिए उसे राम या कृष्ण होना जरुरी नहीं है। वैसे ही मैंने परमात्मा का प्रवचन बताया। बताने मात्र से ही वास्तव में स्वामी या भक्त होना जरुरी नहीं है। आज भक्ति ज्ञान बतानेवाले जितने भी लोग हैं उन सब को परमात्मा पर भक्ति होगी सोचना गलतफहमी होगी" कहा। यह सब सुनकर मुझे थोड़ा आश्चर्य हुआ, फिर भी उन्होंने वास्तविकता बताई, एक तरह से उनकी प्रशंसा करनी चाहिए थी मैंने सोचा।

हम आध्यात्मिकता के बारें में बातें कर रहे थे न! आध्यात्मिकता उन्नत शब्द होते हुए भी न उसमें आत्मा, न ही अध्ययन है। आज ज्योतिष कुछ ही प्रकार के हैं, आध्यात्मिकता अनेक प्रकार के हैं। एक गुरु कहता है नासिकाग्र पर ध्यान केन्द्रित करो, दूसरा गुरु कहता है नाक के अन्दर श्वास पर केन्द्रित करो, एक गुरु कहता है न नाक न श्वास मन पर ध्यान केन्द्रित करो, दूसरा गुरु कहता है मन कैसा होता है कोई नहीं जानता है उस पर ध्यान कैसे केन्द्रित करोगे जिन लोगों ने बताया पूर्णत; झूठ है, मैं जो कह रहा हूँ वही पूर्णत; सत्य है। तुम अपने ध्यान को भृमध्य स्थान पर केन्द्रित करो। अन्य गुरु कहता है मैं मंत्र उपदेश दूँगा, उसे नित्य जाप करते रहो, जन्म रहित हो जाओगे। ब्रम्हकुमारी समाजवाले ॐ शान्ति कहते हैं। शिव, लाल गोलाकार कान्ति के रुप में है। पिरमिड वाले पिरमिड में ध्यान करने को कहते हैं। रामकृष्ण परमाहंस मठ के लोग काली माता को ही ईश्वर कहते हैं। बाबा के भेश में जितने भी लोग हैं वे कहते हैं ध्यान वगैरह मत करो मैं ही ईश्वर हूँ। कई स्वामीगणों का कहना हैं मुझे स्पर्श करने मात्र से ही आप को मोक्ष की प्राप्ति होगी। कुछ और लोगों ने, ईश्वर ने नग्न ही पैदा करवाया है इसलिए वापस ईश्वर के पास जाने के लिए नग्न ही रहना होगा। इस प्रकार बताते रहें तो कई सैंकड़ों

विधान जैसे ;- भक्ति, ध्यान, योग, दीक्षा, उपासना आदि नामों से एक-एक के अनेक भाग हैं। हर एक-एक गुरु एक-एक विधान का बोध करते हुए आध्यात्मिकता को अपनी इच्छानुसार ढ़ाल लिया, जिसे जो मन में आया बताते हुए इसे ही सच्चा ज्ञान कह रहे हैं।

अनेक प्रकार से आध्यात्मिकता को देखते हुए कई लोगों को परमात्मा ज्ञान पर से विश्वास जाता रहा। कुछ लोगों ने तो जो मिला उसी में तृप्त होकर जैसे कि अन्धे में काना राजा, कुछ न रहने से अच्छा है, किसी एक विधान का ही अनुसरण कर लें। कुछ लोग सोचते हैं जीवन में एकबार किसी एक गुरु से उपदेश ले लें, यही बहुत है। जितने प्रकार के गुरु होते हैं, उतने ही प्रकार के शिष्य भी होते हैं। लाखों में कोई एक ही परमात्माज्ञान को जानने का प्रयत्न कर रहा है। परमात्मा पर पूर्णत; पसन्दयुक्त, परमात्माज्ञान को सम्पूर्ण रुप से जानने की इच्छा रखनेवाला लाख में एक, दस लाख में एक, या करोड़ में एक कहीं-कहीं नजर आते हैं। ऐसे लोगों को कोई बहुत बड़ा स्वामी का बताया ज्ञान अशास्त्रीय लगे, तो वे सहमत नहीं होंगें। और यह ज्ञान सच्चा ज्ञान नहीं है उन्हें मालूम पड़ जाएगा। ऐसे बोधों से वे तृप्त न होकर सच्चे ज्ञान की खोज में अन्वेषण करते रहते हैं। इस प्रकार के श्रद्धायुक्त व्यक्तियों को जिस ज्ञान की तलाश उन्हें हैं, उस ज्ञान को अवश्य ही परमात्मा उन तक पहुँचाता है। परमात्मा स्वयं करेगा ? नहीं, स्वयं नहीं करेगा। परमात्मा की जिम्मेदारी प्रकृति ने स्वीकार किया इसलिए इस कार्य को प्रकृति करेगी।

आध्यात्मिकता कुछ स्वामीगणों के हाथों नाटक बन कर रह गया है। स्वामीगण असली ईश्वर को छोड़कर वे स्वयं को ईश्वर का रुप कह रहे हैं। उनके योग्य ज्ञान, और उस ज्ञान के योग्य आचार-व्यवहारों को तैयार कर रहे हैं। और इसी तरह से किसी एक प्रकार से अपनी विशेषता जताते रहते हैं। ऐसी राहों में चलते हुए इन्सान मतों(धर्मों) को बना रहा

है। कुछ लोगों ने भक्ति का विधान बनाया ही नहीं बल्कि, एक बड़ा दल बनाने के लिए मनुष्य मत(धर्म) के विधानों को बनाया। मत(धर्म) में अन्धे होकर मनुष्य परमात्माज्ञान का वक्रकृत कर रहा है। मत(धर्म) के नशे में परमात्माज्ञान को अशास्त्रीय कर रखा है। मनुष्य समाज में चोरी, अत्याचार, हत्या, हिंसा आदि जैसे गुनाह करने पर उस पर कोर्ट, कार्यवाही, शिक्ष(सजा) होती है। परमात्मा विषय में अपराध करने पर क्या कोर्ट, कार्रवाई, शिक्ष(सजा) नहीं होगी ? अगर कोई पुछे तो, उत्तर होगा अवश्य होगी कह सकते हैं। बाह्य समाज में कोर्ट में किसी भी उपाय से र्निदोष साबित होकर रिहा हो सकते हैं, किन्तु परमात्मा विषय में हुई गलती से कोई भी बच नहीं सकता। किसी की भी चलाकियाँ, पैसा ओहदा परमात्मा के शिक्ष(सजा) से वह बचा नहीं सकती। परमात्मा के विषय में हो, या परमात्माज्ञान के विषय में हो उस पर कार्यवाही नजर नहीं आती है। शिक्ष(सजा) देनेवाला भी नजर नहीं आता, शिक्ष(सजा) क्या मिली, मालूम नहीं पड़ता है। सजा अनुभव करने पर भी, किस वजह से सजा मिली मालूम नहीं पड़ता है। बाह्य समाज में प्रपंच संबंधित गुनाह करने पर, बाह्य प्रपंच में शरीर के साथ अनुभव करता रहता है। परमात्मा विषय में हो, ज्ञान के प्रति किया गया गुनाह के लिए मनुष्य को शिक्ष(सजा) प्रपंच में ही भोगना पड़ता है।

भारतवर्ष में पाँच हजार वर्ष पूर्व ही भगवान ने दैवज्ञान का बोध किया था। उन दिनों अधर्म व्याप्त होकर लोग धर्मों से अनजान न रह जाय उद्देश्य से परमात्मा का अंश या शक्ति भगवान एक व्यक्ति के रुप में आकर परमात्मा के धर्मों को बोध कर चले गए। द्वापरयुग के अंत में प्रपंच संबंधित आज जितने अन्याय और अवैध कार्य उन दिनों नहीं हुआ करते थे। इतना ही नहीं दैव ज्ञान से संबंधित आज जितने भी गुरुजन, अनेक भक्ति के विधान, देवताओं के मन्दिर, स्वामीगण, बाबाओं, पीठाधिपतियों, उपदेशों, अनेक प्रकार के आराधनाएँ हो रही हैं, उन दिनों नहीं थीं कह

सकते हैं। हलांकि उन दिनों धर्मों की हानि हो रही थी परमात्मा भगवान के रुप में आकर अपने विषयों को खुद ही बता गए। उन दिनों कितने ही ऋषि, मुनियों के होते हुए भी भगवान को आना पड़ा। आज अधर्मों को प्रबल होने का एक ही कारण है। कृष्ण से पहले व्यास पैदा हुए थे, व्यास की करनी की वजह से धर्मों की हानि होने लगी है। कह सकते हैं।

व्यास जी की लिखे चार वेदों, 1108उपनिषदों, 18 पुराणों आज लोगों में रच बस गया है। उस काल में विद्यावेत्ता, कवि, प्रज्ञाशाली ख्याति प्राप्त व्यास जी के लिखे ग्रन्थों के प्रति लोग आदर- भाव रखते थे, उस काल में अन्य कोई ग्रन्थ न होने के कारण, व्यास द्वारा रचित ग्रन्थों को सब पढ़ा करते थे। जिस प्रकार से सुअरों का खून चूसने वाले मच्छरों से मनुष्यों को मस्तिष्क ज्वर(brain fevar) होता है, उसी प्रकार से व्यास द्वारा लिखे गए ग्रन्थों में माया का प्रभाव अत्यधिक होने की वजह से लोगों में अधर्म रच बस गया। आज भी लोग वेदों, पुराणों, उपनिषदों का ही आचरण कर रहे हैं, आज तक कोई नहीं जान पाया कि उन ग्रन्थों में मायायुक्त अधर्म ही भरे पड़े हैं। हम लोगों के लिए अनभिज्ञ विषय को ग्रहणकर परमात्मा ने भगवान द्वारा अपने धर्मों को सूचित किया। फिर भी बहुत लोगों को नहीं मालूम हैं कि भगवान ने भगवद् गीता में ही असली धर्मों को बताया था। आज भी अदालतों में गवाहों से गवाह दिलवाने के लिए भगवद् गीता पर हाथ रखवाकर कसम दिलवाई जाती है। फिर भी भगवद् गीता पर हाथ रखकर कसम खानेवालों को, भगवद् गीता क्या है ? भगवद् गीता में क्या हो सकता है मालूम नहीं रहता। इस प्रकार से देखें तो वेदों, उपनिषदों, पुराणों का प्रचार होने जैसा, भगवद् गीता को आए पाँच हजार वर्ष होने के बावजुद भी लोगों में प्रचार न हो सका, कह सकते हैं।

आज धरती पर लाखों ग्रन्थों से सर्वप्रथम आया, मनुष्य के जीवन के लिए आवश्यक परमात्मा धर्मों से युक्त, भगवद् गीता कह सकते हैं। इसके पश्चात् इसी तरह से धर्मों का बोध ग्रन्थ भगवद् गीता के बाद तीन हजार वर्ष के बाद आया बाइबल ग्रन्थ। उसके पश्चात् छ; सौ वर्ष में आया क़ुरआन। इन तीनों ग्रन्थों को दैवज्ञान के लिए, धर्मों का मूल ग्रन्थ कह सकते हैं। पहले भगवद् गीता व्यास द्वारा संस्कृत भाषा में लिखा गया। बाद में आया बाइबल हिब्रू भाषा में लिखा गया। उसके बाद आया क़ुरआन अरबी भाषा में लिखा गया। सर्वप्रथम भगवद् गीता कृष्ण ने अर्जुन को केवल पाँच मिनटों में कहा। कुछ दिनों पश्चात् अर्जुन ने व्यास को बताया, व्यास ने सारांश सुनकर विस्तार से श्लोक रुप में लिखा। सर्वप्रथम अर्जुन ने सारांश कुछ मिनटों में सुना था फिर उसने जैसे सुना वैसे ही व्यास को बताया गया। कृष्ण ने जो समाचार बताया उसे उसी तरह से व्यास जी तक पहुँचा कह सकते हैं। व्यास ने जो सुना उसे पूर्णत; लिखा गया। वहाँ तक परमात्माज्ञान बिना किसी मिश्रण के श्लोक रुप में लोगों तक पहुँचा। संस्कृत भाषा में आया भगवद् गीता संस्कृत ज्ञाताओं ने अन्य भाषाओं में अनुवाद किया। भगवद् गीताएँ कई प्रकार की हैं जैसे;- छोटी, बड़ी और मध्य प्रकार की हम सब देखते रहते हैं।

संस्कृत भाषा में भगवद् गीता एक ही परिमाण में, अन्य भाषाओं में छोटे-बड़े होते हैं, इससे हम सुलभता से जान सकते हैं कि इसमें कुछ बदलाव हुआ है। एक श्लोक का अनुवाद करने के लिए अपने भाव के अनुसार कुछ लोगों ने ज्यादा, कुछ लोगों ने कम विवरण दिया। श्लोक में सत्य एक होते हुए भी, लिखनेवाले के भाव में कुछ सत्य, कुछ असत्य पहुँचने की वजह से व्यक्ति व्यक्ति की रचनाएँ छोटी-बड़ी बनी। इस वजह से कई छोटी भगवद् गीताएँ, कई बड़ी भगवद् गीताएँ हम सब देखते रहते हैं। तीन वर्ष पहले तक विद्याप्रकाशानन्दगिरि की लिखी "गीता मकरन्द" नामक भगवद् गीता सब गीताओं में बड़ी थी। गीता मकरन्द 1100 पन्नों

का ग्रन्थ है, उसके बाद 2000 पन्नों का ग्रन्थ सुन्दर चैतन्य स्वामी जी की लिखी चैतन्य भगवद् गीता और भी बड़ी हुई। 200 पन्नों के भगवद् गीता में 2000 पन्नों के भगवद् गीता में, उसके श्लोकों में कोई बदलाव नहीं आया। लेकिन भावों में बहुत अन्तर आया कह सकते हैं। भगवद् गीता को लिखनेवाले लेखकों ने श्लोकों में बिना फेर-बदल किए ज्यों का त्यों रखा, परन्तु उन श्लोकों के अनुवाद में भगवान ने जो भाव बताए थे उनमें फेर-बदल हुआ, और लेखकों के भाव उसमें जुड़ गए होंगें, कह सकते हैं। इस प्रकार कह सकते हैं कि भगवान के बताए भाव कुछ गीताओं में 50 प्रतिशत बदला, कुछ में 60, 70, 80, प्रतिशत तक बदला कह सकते हैं। कुछ लोगों के लिखें भगवद् गीता में केवल 10 प्रतिशत मात्र ही बदलाव हुआ 90 प्रतिशत भगवान के भाव वैसे के वैसे ही रहे है कह सकते हैं। ऐसे कई भगवद् गीताएँ मैंने देखी हैं जिसमें 20, 30, 40 प्रतिशत भाव में बदलाव हुआ है। छोटे आकार के भगवद् गीता ग्रन्थ में अशिकांश भगवान के भाव होना सूचित हो रहा है। हमलोगों को खुश होना चाहिए कि भगवद् गीता श्लोकों के रुप में आज भी हम लोगों के समक्ष है। क्योंकि (रचयिता शरीर के अन्दर स्थित) आत्मा पहुँचाने पर ही, 100 प्रतिशत भगवान के भावयुक्त भगवद् गीता हमलोगों के मध्य आ सकता है, या हो सकता है अब तक आ गया हो।

जहाँ तक मुझे जानकारी है गीता के अध्यायों में दूसरा अध्याय सांख्यायोग में, 11, 19, 22, 23, 47 श्लोकों का भाव, भगवान के बताए भाव के अनुसार अबतक किसी ने नहीं लिखा सूचित हो रहा है। एक ही अध्याय में पाँच श्लोकों का अर्थ सही नहीं निकला इसका मतलब है गीता में कितने और श्लोक होंगे जिसका सही भाव न हो, ठीक से कह नहीं सकते। गीता के इन पाँच श्लोकों का सही भाव शायद कोई लिख लें, लेकिन क़ुरआन ग्रंथ में सुरा 6, आयत 9, और सुरा 50, आयत 21 का सही विवरण कोई नहीं बतला पाएगा कह सकते हैं। इन दोनो सुराओं के दो वाक्यों पर

हजार वर्ष शोधन करने पर भी इसमें अनभिक्ष भाव होने की वजह से शायद ही कोई इनके भाव जान सकें। इसे भी उदाहरण निमित्त ही कहा गया। क़ुरआन ग्रन्थ का अध्ययन कर देखें तो उसमें दिए गए अल्लाह के भाव अनेक लोगों को समझ ही नहीं आया, पुन; जब तक अल्लाह नहीं बताएगा समझ नहीं आएगा, कह सकते हैं।

जब कोई विषय किसी के द्वारा बर्हिगत होता है, तो वह वाक्य के रुप में आता है। वह विषय परमात्मा से आया हो, या मनुष्य से आया हो पहले वह वाक्य होता है। "वाक्य शब्द से पैदा हुआ वाद।" सर्वप्रथम वाक्य बना उसका अनुसरण करते हुए जो भी कहें उसे अनुवाद ही कहेंगें। अनुवाद का अर्थ है जो पहले था उसका अनुसरण करते हुए विवरण बताना। जब कभी भी एक व्यक्ति पहले वाले का अनुसरण करते हुए बताता है तो उसे दूसरा व्यक्ति कहेंगे, उसी तरह से वाद या वाक्य भी दूसरा ही कहलाएगा। जब व्यक्ति बदलता है तो वाक्य का अनुकरण करना बदल भी सकता है, या नहीं भी बदल सकता है। जो व्यक्ति सर्वप्रथम बतानेवाले व्यक्ति के भाव को सौ प्रतिशत ग्रहण करता सकता हो, वह व्यक्ति ही अपने वाद को सर्वप्रथम बतानेवाले व्यक्ति के भाव तुल्य लिख पाएगा, या बतला पाएगा। जो व्यक्ति पहले व्यक्ति के भाव को ग्रहण न कर पा रहा हो वह पहले व्यक्ति के भाव से अलग होकर दूसरे रास्ते जा सकता है। इसे एक उदाहरण द्वारा समझते हैं। एक व्यक्ति ने पास खड़े दूसरे व्यक्ति से , तीसरे व्यक्ति के लिए भोजन की थाली लाने को कहता है। दूसरा व्यक्ति रसोईघर में रखा एक थाली ले आता है। तीसरा व्यक्ति भोजन कर रहे एक व्यक्ति के हाथों से थाली जबर्दस्ती ले आता है। पहले व्यक्ति ने कहा था भोजन की थाली लाने को, दूसरे व्यक्ति ने भोजन करने के लिए खाली थाली ले आया। तीसरे व्यक्ति ने समझा जो व्यक्ति भोजन कर रहा उसके पास से भोजन सहित थाली को लाना है और ले आया। अब दूसरे और तीसरे व्यक्तियों में किसका भाव सही था यदि पास मे खड़े

हमलोगों को जानना हो तो, सबसे पहले हमें जानना होगा कि पहले व्यक्ति ने किस भाव से कहा था, उस भाव को दूसरे व्यक्ति ने सही ग्रहण किया या तीसरे व्यक्ति ने। उसी प्रकार भगवद् गीता हो, या अन्य मूल ग्रन्थ हो, परमात्मा के बताए वाक्यों को पूरी तरह से न समझ पाने के कारण संदिग्ध अवस्था में रह गए। उन्हें पूर्णत; सही भाव से समझना हो तो पुन; अल्लाह को ही आकर बताना पड़ेगा। संदिग्ध युक्त कई सूक्ष्म ज्ञान वाक्यों(पहलूओं) को अल्लाह के अलावा अन्य कोई भी मनुष्य नहीं जान सकता, क़ुरआन ग्रंथ मे सुरा 3, आयत 7 में बताया गया। "भगवद् गीता में आदि में बताया गया ज्ञान राजविद्या(ब्रम्हविद्या) के रुप में है। राज(बड़ा) गुप्त रहने योग्य। इस कारण अभी पुन; विवरणपूर्वक कह रहा हूँ सुनो, हे अर्जुन" भगवान श्री कृष्ण ने कहा था।

परमात्मा द्वारा कहा हुआ भगवद् गीता हमलोगों के पास होते हुए भी, जब अनुवाद हुआ थोड़ा अन्तर आया अर्थात् पूर्णत; समझ न आ सका कह सकते हैं। कुछ मनुष्यों ने गीता के भाव को कहीं-कहीं गलत लिखा, और साथ ही निजी स्वार्थ हेतु कई कल्पित श्लोकों को जोड़ दिया। उन्हीं श्लोकों के कारण परमात्मा भाव के विपरीत भाव गीता में नजर आ रहे हैं। हमनें "**त्रैत सिद्धान्त भगवद् गीता**" ग्रन्थ की रचना की जिसमें रचयिताओं द्वारा लिखे कल्पित श्लोकों को पहचानकर पृथक कर दिया गया। ईश्वर जब सृष्टि की रचना कर रहे थे अपने प्रत्यर्थी के रुप में, स्त्री स्वरुप साथ में रहने हेतु प्रकृति की रचना की। प्रकृति, ईश्वर की आज्ञानुसार सारें प्राणीयों का पालन करती रहती है। हर मनुष्य के अन्दर ऊर्जा के रुप में रहने हेतु आत्मा का वास है, कार्यों को प्रेरित होने में गुणों के रुप में प्रकृति विद्यमान है, कह सकते हैं। प्रकृति द्वारा बनें गुणों को माया कहा जाता है। भगवद् गीता लिखने के लिए माया संबंधित गुण ही, गलत सोच देकर मनुष्य को प्रेरित करती है, और आत्मा हाथों से लिखवाती है। गीता का अनुवाद करने में उकसावा, सोच, आचरण, सारे गुण तथा आत्मा द्वारा

किया जाता है, उस कार्य को करने में,जीव की कोई हिस्सेदारी नहीं थी। फिर भी जीव अपने अज्ञानता से उस कार्य को उसी ने किया सोचता रहता है। और उस कार्य से मिला प्रतिफल जो भी हो चाहे अच्छा हो, या बुरा हो उसका दायित्व वह खुद ही बनता है। भगवद् गीता को गलत रुप में लिखवाना माया(सारे गुण) करती है, शरीर को हरकत में लाकर कार्य करवाना आत्मा का कार्य है। जीव, जिस कार्य को उसने नहीं किया अनावश्यक ही अपनी अज्ञानता से उत्तरदायी बना , गलत भाव का सृजन प्रकृति जनित माया ने किया, और साथ ही आत्मा ने लिखवाया। ये दोनों परमात्मा द्वारा निर्मित हुए हैं और परमात्मा धर्मों को, एवं शक्ति को जानते हैं, तो फिर दोनों ने गलत रुप में गीता क्यों लिखवाया, यदि ऐसा स्वयं ही प्रश्न कर देखें तो, परमात्मा उनके नापसन्द लोगों को उनसे, उनके ज्ञान से दूर ले जाने के लिए माया द्वारा, आत्मा द्वारा वैसा करवाता है, सूचित हो रहा है। यह सब परदे के पीछे (अप्रत्यक्ष) होता है, इसे कोई नहीं जान सकता, कह सकते हैं।

परदे के सामने(प्रत्यक्ष) उस कार्य में गलती के लिए जीव का ही दायित्व बनता है। क्योंकि जो कार्य उसने नहीं किया, उसने(जीव) ही किया सोचने के कारण, गीता को गलत भाव से अनुवाद करने के लिए जीव शिक्ष(सजा) के योग्य होता है। आध्यात्मिकता में आगे बढ़ने हेतु स्वयं जीव को अधिकार प्राप्त है, परमात्मा ने अवसर दिया उसका उपयोग नहीं करके अपने अहंकार में आकर, बिना गलती किये शिक्ष(सजा) के योग्य बनता जा रहा है। परमात्मा मार्ग में, ज्ञान लब्ध होने के लिए न ही कर्म रुकावट बनती है, और न ही ऐसा कोई नियम है। ज्ञान कितना भी बड़ा क्यों न हो यदि श्रद्धा रखी जाय, ज्ञान लब्ध हो सकता है। परन्तु अवसर मिलने के बावजुद भी मनुष्य अपनी श्रद्धा को दुनियादारी पर रखता है इस वजह, परमात्मा के लिए वह व्यक्ति नापसन्द है। परमात्मा जिन्हें पसन्द नहीं करते उन्हें प्रकृति, माया के रुप में अपने गुणों द्वारा परमात्मा

से दूर रखती है। इसलिए वेमन योगी ने अपने दोहे में **पति मान जाय तो पत्नी मानेगी**, कहा। पति अर्थात् परमात्मा, पत्नी अर्थात् प्रकृति समझना चाहिए।

परमात्मा विषय में जीव पूर्णत; स्वतंत्र होता है, परमात्मा विषयों पर श्रद्धा न रख कर, प्रकृति संबंधित विषयों पर ही दिलचस्पी दिखाने के कारण, जीव परमात्मा विषयों में अपराधी बनता है, और शिक्ष(सजा) का हकदार होता है। ईश्वर ने अपने ज्ञान को भगवान द्वारा ज्ञात करवाया, भगवान ने भगवद् गीता में जो नहीं कहा जैसे;- आराधनाएँ जीव स्वयं उन आराधनाओं को सृजन कर रहा है।

परमात्मा, उनकी आराधना कैसी करनी चाहिए, उनके ज्ञान द्वारा परमात्मा को कैसे जाना जाएगा, परमात्मा की जानकारी करवाने के कौन से धर्म होते हैं, परमात्मा को न जानने के अधर्म कौन से हैं पूर्णत; बताने के बावजुद भी, धर्मों को न पहचान पाना, आचरण न करना ही नहीं बल्कि मनुष्य दैवमार्ग में लक्ष्य प्राप्ति की रुकावटें अधर्मों का आचरण कर रहा है। अधर्म विषयों के ज्ञान से अनजान मनुष्य से, हमें ज्ञान मालूम हैं कहनेवाले स्वामीजी जैसे लोग दैव दृष्टि में अपराधी बन रहे हैं। खुद को ज्ञानी, स्वामी कहनेवाले किस तरह धर्मों को न पहचानकर अधर्मों का आचरण कर रहे हैं थोड़ा विस्तार से जानकारी करेंगें। भगवद् गीता में ज्ञानयोग में सातवाँ श्लोक का भावार्थ इस प्रकार से है। "धरती पर जब-जब धर्म की हानि होती है, और अधर्म का अभ्युथान अर्थात् उन्नति होती है, तब-तब ही मैं अपने को रचकर प्रकट होता हूँ," परमात्मा ने भगवान के रुप में कहा था। भगवान का आना धर्मों को सूचित करने के लिए था, तथा किसी भी प्रकार के अधर्मों से उन्हें नहीं जाना जा सकता विवरणपूर्वक बताया गया।

उदाहरण के लिए एक स्वामी जी ने भगवद् गीता पर दस दिनों तक प्रवचन दिया और अच्छा नाम कमाया। भगवद् गीता बताते समय अनेक उपमान दिए जिसे सुनकर लोग अच्छी तरह से समझ सकें। उनके बोधों को सुनकर अनेक लोगों ने जाना कि असली परमात्मा एक ही है, वे ही सर्वों के अधिपति है, उनकी आराधना करने से ही मोक्ष की प्राप्ति होगी। और तब से ही अन्य देवताओं की आराधनाएँ, वृक्षों की पूजा, साँप की पूजा, पितरों की पूजा, पूजा कर नारियल फोड़ना सब त्याग दिए। आपने सब कुछ क्यों छोड़ा? कोई उनलोगों से प्रश्न करे तो, वे कहते हैं कि जीर्णानन्द स्वामी ने गीता बोध किया जिसे सुनकर हमनें गीता को अच्छी तरह समझा। जीर्णानन्द स्वामी ने राजविद्या राजगुह्य योग अध्याय में 25 वाँ श्लोक बताया तथा उसका भावार्थ बताने के बाद किसी की पूजा नहीं करनी चाहिए हमलोगों ने सोचा, कहा। उन्होंने इस प्रकार से सुना।

25 श्लोक : यान्ति देवव्रता देवान्पितृन्यान्ति पितृवृता ; ।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम् ।।

भावार्थ :- : देवताओं के उपासकगण देवताओं को प्राप्त होते हैं। पितरों की पूजा करनेवाले पितरों को प्राप्त होते हैं। साँपों की, गायों की, वृक्षों की पूजा करनेवाले उन्हीं को प्राप्त होते हैं। मेरा पूजन करनेवाले मुझे ही पाते हैं।" इस श्लोक और भावार्थ सुननेवालों ने सोचा कि ईश्वर की आराधना कर ईश्वर में ही लीन होना चाहिए। उन्होंने देवी-देवताओं को त्याग दिया। उस श्लोक को सुनने के बाद कई लोगों में परिवर्तन आया, कुछ दिनों के बाद एक टी. वी प्रोग्राम में भगवद् गीता में बताए गए "यान्ति देवव्रतान देवान" श्लोक को बोध करनेवाले जीर्णानन्द स्वामी ने भाग्य लक्ष्मी मन्दिर में पूजा करते दिखलाई पड़े। उनके बोध को सुनकर जिन लोगों में परिवर्तन आया था उनलोगों ने उस दृश्य को देखा। उन लोगों के मन में एक प्रश्न उठा। सारी सृष्टि में परमात्मा ही उत्कृष्ट है, उनकी ही आराधना करनी चाहिए, उनकी आराधना करने से उन्ही में लीन हो

जाओगे, वर्ना आप जिनकी पूजन करोगे उन्हीं को प्राप्त करोगे, हम सब को बतानेवाले जीर्णानन्द स्वामीजी, फिर क्यों जो परमात्मा नहीं है उस देवी की पूजा कर रहे थे ?

अनजाने में ही हमलोग को अपराध, कोर्ट, कार्यवाही, तथा शिक्ष(सजा) से होकर गुजरना पड़ता है। परमात्मा ज्ञान यानि भगवद् गीता में परमात्मा की आराधना को श्री कृष्णजी ने उत्कृष्ट बताते हुए, देवताओं की पूजन करनेवालों को अज्ञानी कहा। विज्ञानयोग 20, 23 वाँ श्लोक में,

20 वाँ श्लोक कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञाना; प्रपद्यन्तेऽन्यदेवता; ।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियता; स्वया ।।
23 वाँ श्लोक अन्तुवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम् ।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि ।

20 वाँ भावार्थ :- प्रपंच संबंधित पापों द्वारा, कामनाओं में डुबे कई अज्ञानी, मुझे छोड़ अन्य देवताओं के नियम के अनुसार उनकी ही पूजा करते हैं।

23 वाँ भावार्थ :- उन अल्पबुद्धिवालों का फल अल्प ही होता है। देवताओं को पूजनेवाले देवताओं को ही पाते हैं, और मेरे भक्त मुझको ही पाते हैं।

परमात्मा भगवान के रुप में भगवद् गीता में इन बातों को जो पहले ही बताया गया था, और जो जीर्णानन्द स्वामीजी ने अभी किया क्या गलत नहीं था ? इस पर हम विचार करेंगे। भगवद गीता को सम्पूर्ण रुप से जाननेवाले जीर्णानन्द स्वामी को परमात्मा ने बताए सारी बातें, श्लोक स्मरण तो था, उन्होंने उसे दूसरों को बताने के लिए ही सीखा था। विज्ञानयोग में 20 वाँ श्लोक के अनुसार प्रपंच संबंधित कामनाओं से युक्त लोग, उन कामनाओं के कारण ज्ञान को स्मरण में न रखकर, अज्ञानियों की भांति देवी-देवताओं के नियमानुसार पूजन करते हैं, जीर्णानन्द स्वामीजी ने भी अपने कामनाओं के कारण देवी पूजन करने से देवी की कृपा दृष्टि

उन पर सदा रहेगी, इस भावना से भाग्यलक्ष्मी मन्दिर में जाकर पूजन करने लगे। भगवद् गीता पढ़नेवाले साधारण मनुष्य भी परमात्मा और देवताओं में तरतम(भेद) जान ही जाते हैं। इस प्रकार के विधान भगवद् गीता में होते हुए भी, दूसरों को गीता बोध करने की योग्यता रखनेवाले स्वामी जी ने एक तरफ परमात्मा को उत्कृष्ट कहते हैं, और वहाँ जाने के बाद अपने बातों को भुलाकर, परमात्मा से भी देवी को उत्कृष्ट समझ, एक देवी की पूजा करना हमलोगों को चाहे जैसा भी महसूस हो किन्तु परमात्मा की दृष्टि में बहुत बड़ा अपराध होता है।

विश्व और उसमें समस्त प्राणीयों को सृजनकर, उनके द्वारा रचना हुई सृष्टि को सर्वदा चलते रहने की व्यवस्था करनेवाले परमात्मा ने मुझे जानिए, मेरी वजह से ही आपका सब कुछ हो रहा है, आपके अपने जो जन्म हैं उसे रहित करना चाहते हो तो मेरा ज्ञान ही आधार है अपने ज्ञान को गीता में सूचित करने पर भी, उनकी बातों को अनसुना कर वर्ताव करनेवाला कोई भी हो, परमात्मा द्वारा निर्णीत शिक्ष(सजा) से बच नहीं सकता। परमात्मा ने बताया नहीं हमें मालूम नहीं पड़ा कहकर लोगों को अपना बचाव करने का अवसर मिल सकता है। वैसा अवसर ही न रहे परमात्मा ने कुछ लोगों के लिए भगवद् गीता के रुप में, कुछ लोगों के लिए बाइबल के रुप में, और कुछ लोगों के लिए क़ुरआन ग्रन्थ के रुप में परमात्मा ने अपने धर्मों को सम्पूर्ण रुप से सूचित कर रखा। परमात्मा ने अपने ज्ञान को बहुत पहले ही सूचित कर रखा था, परमात्मा के बताए ज्ञान को जानना ही जीवन का सारांश होता है न जानने के कारण, दुनिया में धन अर्जन करना ही जीवन का सारांश कुछ लोगों का मानना है। सामान्य व्यक्ति को छोड़िए अपने को ज्ञानी कहनेवाले अधिकाशं स्वामीगण भी परमात्मा मार्ग में शिक्ष(सजा) के हकदार बन रहे हैं, कहा जा सकता है।

एक साधारण मनुष्य को परमात्मा मार्ग का अनुसरण करने के लिए सबसे पहले क्या करना चाहिए, अनुसरण कैसे करना होगा जानने के लिए एक गुरु के आश्रय में जाता है, और उनके बताने के अनुसार करने लगता है। आज के जमाने में हो, या प्राचीन काल में हो एक व्यक्ति गुरु के आश्रय में जाता है, तो गुरु उस व्यक्ति को गुरुपदेश देकर अपना शिष्य बनाता है। इससे वह व्यक्ति(शिष्य) उस गुरु को छोड़कर दूसरे गुरु के पास नहीं जा पाता। और वह शिष्य उस गुरु का होकर रह जाता है। शिष्य किसी दूसरे रास्ते में न जा सके उसे अन्य ग्रन्थों का अध्ययन करना, अन्य बोधों को सुनने की मनाही रहती है। और वह शिष्य गुरुपदेश में बताए मंत्र को प्रतिदिन जाप करते रहता है। अपने को गुरु कहनेवालों का कहना है कि प्रतिदिन ध्यान (मेडिटेशन) करना जीवन में अनिवार्य है, इसे करते रहने से मनुष्य परमात्मा मार्ग में प्रयाण करता हुआ और अंत में परमात्मा में लीन हो जाता है। इतना ही नहीं मध्य-मध्य में यज्ञ करना, वेदों को पढ़ना, तथा दान करते रहते हैं। किसी एक पर ध्यान लगाने को तपस्या भी कह सकते हैं।

प्रपंच में एक व्यक्ति अपने को स्वामी, या गुरु जताने के लिए यज्ञ, दान, वेदों का अध्ययन करना, तथा तपस्या करते रहते हैं। जो इन चारों को करते हैं वही समाज में ज्ञानी, स्वामी, तथा गुरु के रुप में जाने जाते हैं। एक गुरु के रुप में स्वामी जी इन चारों में से कुछ को कम कुछ को ज्यादा करते रहते हैं और अपने शिष्यों द्वारा भी करवाते रहते हैं। इस प्रकार से गुरु के पास रहकर शिष्य भी यज्ञ, दान, वेदाध्ययन, तप करते रहते हैं और सोचते हैं कि वे ही उन महान कार्यों को कर रहे है, जो अन्य नहीं करते। प्रपंच में इन चारों कार्यों को दैव मार्ग में उत्कृष्ट कार्य मानते हैं। इन चारों कार्यों को ऋषि-मुनि भी किया करते थे। कृतयुग के बाद त्रेतायुग(त्रैतायुग) में त्रिकाल ज्ञानी, ब्रम्हज्ञानी, द्रविड़ब्राम्हण। रावणब्रम्हा ने इन चारों कार्यों को पूर्णत; विरोध किया था, तथा हो रहे यज्ञों को

विध्वंस करवा दिया करते थे, हमने सुना था। एक व्यक्ति जो ब्रम्हज्ञानी हो, उन्होंने क्यों विरोध किया, लोगों को उन चारों कार्यों में उत्कृष्टता क्यों दिखलाई देती हैं, आज भी कितने ही ख्याति प्राप्त स्वामीगण भी कर रहे हैं, उन्होंने यज्ञों को क्यों भंग किया जानने के लिए, हम लोगों को ब्रम्हविद्या शास्त्र को प्रमाण के रुप में लेकर देखना होगा। कौन सा शास्त्रीय, कौन सा अशास्त्रीय शास्त्रों द्वारा ही जाना जा सकता है। व्यक्तियों के कार्य के आधार पर सही है, या नहीं अनुमान नहीं लगाना चाहिए। पूर्व से ही निर्मीत हुआ शास्त्र के आधार पर कोई भी कार्य सही है, या नहीं कह सकते हैं। आज भी सब उत्कृष्टता से आचरण करनेवाले यज्ञ, दान, तपस्या, वेदों का अध्ययन जैसे कार्यों को दैवमार्ग में रहनेवाले ज्ञानी करते नहीं हैं, इसलिए इन्हें षठ शास्त्रों में ब्रम्हविद्या शास्त्र के अनुसार विस्तार से परखना चाहिए।

प्रस्तुत काल में ब्रम्हविद्या शास्त्र कहाँ है देखें तो तीनों ग्रन्थों में ब्रम्हविद्या शास्त्र दिखलाई देगा। हिन्दूओं(इन्दूओं) को भगवद् गीता में, ईसाईयों को बाइबल में, मुस्लिमों को क़ुरआन ग्रन्थ में परमात्मा से संबंधित ब्रम्हविद्या शास्त्र के सूत्र सूचित हैं। अब हमलोग इन्दू (हिन्दू) हैं इसलिए भगवद् गीता को ही देखना होगा। भगवद् गीता सौ प्रतिशत ब्रम्हविद्या शास्त्र होने के कारण, उसे शुरु से अंत तक परिशीलन कर देखने से, विश्वरुपदर्शनं योग अध्याय में 48 तथा 53 श्लोकों में, अक्षर परब्रम्हयोग योग में 28 वाँ श्लोक में ब्रम्हज्ञान के बारें में, वेदाध्ययन के बारें में, दान और तपस्या के बारें में कहा गया। इन सब के बारें में नीचे विवरण करते हैं देखिए। सबसे पहले अक्षर परब्रम्ह योग में 28 वाँ श्लोक को देखते हैं।

28 वाँ श्लोक, वेदेषु यज्ञेषु तप;सु चैव दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टम् ।
अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम् ।।

भावार्थ :- "मेरे कहे हुए ज्ञान को जाननेवाला वेदाध्ययन केकारण, यज्ञों के कारण, दानों के कारण, तपस्या के कारण प्राप्त पुण्यफल जो अतिक्रमण कर जाता है, योगी पुरुष परम श्रेष्ठ मोक्ष पद को पा लेता है।"

भगवान के कहे हुए इन विषयों को देखेने से हमारे समझ में आनेवाला विषय इस प्रकार से है ! वेदों के कारण हो, यज्ञों के कारण हो, तप के कारण हो, दानों के कारण हो प्रपंच संबंधित प्रतिफल पुण्य लब्ध होता है। स्मरण रखना चाहिए पाप और पुण्य दोनों प्रपंच संबंधित फल देता है। इन दोनों के कारण ही कष्ट और सुख प्राप्त होते हैं कहा गया। प्रपंच संबंधित फल से उत्कृष्ट दैव संबंधित फल होता है। दैव संबंधित धर्मों के कारण जन्म, मोक्ष प्राप्त होते हैं। जैसे कष्ट रहने से सुख नहीं रहता है। वैसे ही जन्म मिलने से मोक्ष नहीं मिलता है। कष्ट-सुख, जन्म-मोक्ष प्रकृति-परमात्मा के अलग-अलग प्रतिफल होते हैं। प्रकृति संबंधित कष्ट और सुखों, मनुष्य द्वारा किए पाप-पुण्य से मिलते हैं। दैव संबंधित जन्म-मोक्ष, मनुष्य का आचरण धर्मों, अधर्मों के अनुसार लब्ध होता है। इस श्लोक में कहा गया यज्ञ, दान, वेद, और तप चारों कार्य प्रकृति से संबंधित रखता है या परमात्मा से संबंधित रखता है देखें तो, लोग इसे दैव संबंधित कार्य मानकर करते हैं। परन्तु गीता में कहा गया इन कार्यों से पुण्यफल मिलता है, पुण्य से सुखों को अनुभव करने हेतु जन्म प्राप्त होता है, कह सकते हैं। भगवद् गीता में इन कार्यों को प्रकृति संबंधित कार्य के रुप में बताया गया है देखें तो, मोक्ष न प्राप्त कर जन्मों की प्राप्ति अधर्म कार्यों के रुप में नजर आते हैं। यह बात सबको आश्चर्य में डाल सकता है इसे और अधिक गहराई से जानने की आवश्यकता है।

दैवमार्ग में धर्म कार्यों के कारण मिला फल मोक्ष होता है, मोक्ष अर्थात् जन्मों से रिहा होकर (शरीर जन्म से बाहर आना) परमात्मा में लीन होना। जैसे ही जीव परमात्मा में लीन होता है, तबतक अनजान रहा

परमात्मा को जीव जान जाता है। जीव, परमात्मा को जानने के बाद जीव ही नहीं रहता। वह परमात्मा में लीन होकर शरीर से, कर्म से मुक्ति पा लेता है। कर्म से मुक्त पाने को मोक्ष कहा जाता है। धर्मों द्वारा मोक्ष या दैवदर्शन लब्ध होता है और अधर्मों द्वारा जन्म लब्ध होता है। अधर्म द्वारा लब्ध जन्म में, अधर्म द्वारा लब्ध पुण्य से सुखों की प्राप्ति होती है। यही विषय ऊपर श्लोक में "वेद, यज्ञ, दान, तप की वजह से लब्ध पुण्यफल से बढकर मेरे ज्ञान से धर्म को जानने से वह योगी पुरुष मोक्ष को पा लेता है" कहा गया। इसके अनुसार यज्ञ, दान, तप, वेद सब दैव मार्ग में स्थित अधर्म होते हैं, योग धर्म को सूचित करता है। वेद, यज्ञ, दान, तप चारों अधर्म हैं, इन से परमात्मा को जानना असंभव है यही विश्व रुप दर्शनं योग 48, 53 श्लोकों में बताया गया है। देखिए।

48 वाँ श्लोक न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानैर्न च क्रियाभिर्न तपोभिरुग्रै; ।
एवंरुप; शक्य अहं नृलोके द्रुष्टं त्वदन्येन कुरुप्रवीर ।।

भावार्थ :- हे अर्जुन ! न तो वेद और यज्ञ द्वारा, न तो दान और उग्र तपों द्वारा, अभी मेरा यह रुप तेरे सिवा और किसी के लिए देखना संभव नहीं है।

मेरे कहे हुए धर्मों से परमात्मा को जाना जा सकता है अक्षर परब्रम्हयोग में अन्तिम श्लोक में भगवान ने कहा, इन चारों कार्यों के कारण परमात्मा के दर्शन करना संभव नहीं है कहा गया। भगवान ने इन चारों कार्यों को अधर्म कार्यों के रुप में प्रकट किया। अधर्म कार्यों की वजह से सुखों का कारण पुण्य जन्मों के लिए जाते हैं, मोक्ष लब्ध नहीं हो सकता, समझ सकते हैं। 53 श्लोक में भी यही कह गया है।

53 वाँ श्लोक नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया ।
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ।।

भावार्थ ;:- वेदों से, तपों से, दानों से, यज्ञों से मेरा रुप देखना संभव

नहीं है। तुने मेरा विश्व रुप देखा, इन चारों कार्यों द्वारा मुझे देखना संभव नहीं है।

48 वाँ श्लोक विश्वरुप में थे कहा गया, 53 वाँ श्लोक विश्व रुप को छोड़ने के बाद साधारण कृष्ण के रुप में कहा था। इन दोनों श्लोकों में एक ही भावार्थ सूचित किया गया। इन चारों कार्यों के कारण मुझे जाना नहीं जा सकता कहा ही नहीं बल्कि, राजविद्या राजगुह्य योग में 25 वाँ श्लोक में देवी-देवताओं का पूजनेवाले, पितरों को पूजनेवाले, उन्हें ही पाते हैं, मेरे पास नहीं आ सकते, कहा। भगवान के कहे हुए इन बातों से समझ सकते हैं कि शास्त्र प्रमाण से परमात्मा के पास नहीं पहुँचानेवाले कार्य सारे, अधर्म होते हैं। परमात्मा के पास धर्म ही पहुँचा सकते हैं, सूचित हो रहा है। यज्ञों द्वारा अन्य देवताओं की पूजा करते हैं। इसलिए सभी प्रकार के आराधनाओं को यज्ञ कह सकते हैं। ये सब अधर्म हैं कहने पर भी, परमात्मा के बातों पर ध्यान न देकर अपनी इच्छानुसार अन्य देवताओं को पूजन करनेवाले, यज्ञ करनेवालें, तपस्या करनेवाले परमात्मा के लिए अधर्मी होते हैं। धरती पर अधर्म नहीं रहने चाहिए, भगवान बार-बार अवतरित होकर धर्मों को सूचित कर रहे हैं, परन्तु परमात्मा के उद्देश्य को, परिश्रम को न पहचान कर और लगातार अधर्मों का आचरण करते रहें तो परमात्मा को क्रोध न आएगा ! परमात्मा, भगवान के रुप में शरीर को धारण कर धरती पर आकर अनेक अपमानों को सहते हुए कई वर्षों की अवधि तक अपने ज्ञान, धर्मों को सूचित किया, फिर भी उनके श्रम की परवाह न कर, परमात्मा ने ही कहा कहकर अनादर करते हुए धर्मों को अनदेखा कर, अधर्मों का आचरण करते रहना, परमात्मा का अनादर कहा जाएगा। ऐसे में ईश्वर को क्रोध आएगा न ! आएगा।

उनका क्रोध मनुष्यों की तरह नहीं होता। वे कभी किसी पर क्रोध नहीं करते। सृष्टि के आदि में ही ऐसे कार्यों को जो करते हैं उन्हें

शिक्ष(सजा) होगी। पूर्व ही फैसला ले लिया गया। उन फैसलों को शास्त्रीयता से निर्णय कर रखा गया। सृष्टि के आदि में निर्णीत फैसले के अनुसार ही आज जो गलती करता है उसे शिक्ष(सजा) मिलेगी। परमात्मा द्वारा शास्त्रबद्धता से निर्णीत फैसले से कोई बच नहीं सकता। आज मनुष्य अपनी इच्छानुसार आदतें सीखकर, मेरे अलावा किसी अन्य की आराधना मत करो परमात्मा के कहे हुए बातों का, वैसा मत बोलो, हमारे मन को ठेस पहुँचती है कहने पर भी, यह हमारा सनातन धर्म है चिल्लाने पर भी ईश्वर नहीं मानेगा। मैं ही सनातन हूँ और मुझ सनातन की आराधना करना ही धर्म होता है, आज तुम्हारी अपनी आदतें सनातन कैसी हो गई, ईश्वर प्रश्न कर सकता है। इतना ही नहीं तुझे मन और बुद्धि मैंने दिया, शरीर के अन्दर मन और बुद्धि मेरा है, तेरे मनोभाव मुझ पर रखनी चाहिए, अपनी पसन्द के देवी-देवताओं पर तुने रख छोड़ा है, उसे छोड़ दो अच्छी बातें कहते हैं तो, हमारे मनोभावों को चोट पहुँचता है कहना, जैसे;- पत्नी अपने पति से कहती है मेरा दिल दूसरे पर आ गया , ईश्वर प्रश्न करेगा। भगवद् गीता में राजविद्या राजगुह्य योग 34 वाँ श्लोक में इस प्रकार से कहा गया देखिए।

34 वाँ श्लोक, मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि युक्त्त्रैवमात्मानं मत्परायण; ।।

भावार्थ :- "तेरी भक्ति मुझ पर रखो, तेरा मन मुझ पर रखो, तु मुझे ही नमस्कार किया कर, तू मेरा ही पूजन किया कर, तू मेरे शरण आ मुझ परमेश्वर को प्राप्त हो जायगा।" कहा गया। मनुष्य को जो पसन्द उसकी पूजन करना नमस्कार करता है। अगर कोई उसके भले के लिए ईश्वर के अलावा अन्य की पूजन मत किया कर, नमस्कार मत किया कर कहें तो बदलें में नाराज होकर हमारे मनोभावों को ठेस पहुँचेगी। उदाहरण :- "आदत से मजबूर एक जेबकतरे को देखकर पुलिस ने कहा चोरी करना

बुरी बात है कुछ काम करो और जीयो।" चोर ने "ऐसा मत कहिए हमारे मनोभाव को ठेस लगेगी" कहा। पुलिस ने उसकी बात सुनकर कहा, तेरे मनोभाव नीचे के जेब में हैं या ऊपर की जेब में हैं। यह तो परमात्मा ज्ञान है, लोग नहीं समझते कि हमारे भले के लिए ही बतला रहे हैं बिना सोचे, समझें इसे लिखनेवाले यानि हमारे विरोध में भी बातें कह सकते हैं। आप मुझे जो चाहे समझे अच्छा ही है, हमारा कहना है कि आप परमात्मा के फैसले को, और शिक्ष(सजा) को याद रखे रहें। परमात्मा ने मनुष्य को ज्ञान सूचित निमित्त हम हिन्दूओं(इन्दूओं) को भगवद् गीता ग्रन्थ दिया। और कहा यह मेरा शास्त्र है। लेकिन मनुष्य भगवान का दिया ग्रन्थ(शास्त्र) को छोड़कर कोई ऐरागैरा के कहे हुए साधना को पकड़ कर यही ज्ञान और साधना हैं कहें तो ईश्वर को क्या क्रोध नहीं आएगा? इस प्रकार के लोगों के बारें में भगवान क्या कह रहे हैं, दैवासुर संपद विभाग योग में 23 वाँ श्लोक में कहा है।

23 वाँ श्लोक   यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारत; ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ।।

भावार्थ :- "ब्रम्हविद्या शास्त्र विधान को छोड़कर कामनाओ से इच्छानुसार वर्ताव करनेवाला न ही सुख पा सकता, न ही किसी में सफल हो सकता, न ही मोक्ष पा सकता है" कहा। ब्रम्हविद्या शास्त्र को नकार कर, मेरा फलाँ सिद्धान्त कहकर, मेरा फलाँ पिरमिड कहकर, मेरा फलाँ साधना कहकर, मेरा फलाँ आराधना कहकर, मेरा फलाँ मत(धर्म) कहकर, मेरा फलाँ परम्परा कहकर, ऐसे कई हैं, दुनिया की नजर में ख्याति प्राप्त स्वामी बनना, कोई कैसा भी व्यक्ति क्यों न हो परमात्मा की दृष्टि में अपराधी होता है। लोग चाहे जैसे भी हो, अधर्मों का आचरण करनेवाले जो भी व्यक्ति हो शिक्ष(सजा) निश्चित है। कैसी शिक्ष(सजा) मिलेगी दैवासुर संपद् विभाग योगो अध्याय में 19, 20 श्लोकों में देखेंगे।

19 वाँ श्लोक तानहं द्विषत; क्रूरान्संसारेषु नराधमान् ।
क्षिपाम्यजस्त्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ।।

भावार्थ ;- क्रूरता से युक्त लोगों को, असूय से भरे लोगों को, अच्छाई से द्वेष करने वाले को, नराधमों को आसुरी योनियों में गिराता हूँ, और संसार दुख की प्राप्ति करवाता हूँ।

20 वाँ श्लोक आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि ।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम् ।।

भावार्थ :- आसुर योनि में जन्म लेनेवाले जन्म-जन्म यानि हर जन्म में अज्ञानी बनकर, मेरे ज्ञान, श्रेष्ठ मार्ग को न पाकर, उन पूर्वप्राप्त योनियों की अपेक्षा भी अधिक अधमगति को प्राप्त करते है।"

अबतक हम शिक्ष(सजा) के बारें में कह रहे थे जो अनिवार्य है, यह नहीं बताया कि कैसी शिक्ष(सजा) मिल सकती है। परमात्मा द्वारा कहे हुए विषयों में ही शिक्ष(सजा) के बारें में गोचर हो रहा है। राक्षस गुणवालों के गर्भ में पैदा होकर दुखों को पाना और समय व्यतीत होने के साथ ही, जन्मों को लेते हुए जन्म-जन्म में उन पूर्वप्राप्त योनियों की अपेक्षा अधिक अधमगति को प्राप्त करते रहेंगें, ऐसे लोग मेरे द्वारा ज्ञान और मुझे न पा सकेंगें, कहा गया! इसे सुनने के बाद एक प्रश्न आ सकता है। जो इस प्रकार है! राक्षस योनियों में जन्म लेनेवाले जन्म-जन्म में ज्ञान को न पाकर अधमगति को प्राप्त करेंगें कहे थे न! अधर्मों का आचरण कर शिक्ष(सजा) पानेवाला कितने जन्मों तक आसुर योनियों में पैदा होता रहेगा? कितने जन्मों में शिक्ष(सजा) समाप्त हो जाएगी? पुछ सकते हैं। इसका उत्तर इस प्रकार से है! किसी भी शिक्ष(सजा) के लिए कालपरिमिती बाह्य कोर्ट में देखते रहते हैं। वैसे ही परमात्मा कोर्ट में परमात्मा फैसले में भी कुछ कालपरिमिती होती होगी सोच रहे हैं। बाह्य शिक्ष(सजा) के लिए एक ही जन्म में कुछ वर्षों की अवधि तक ही शिक्ष(सजा) अमल में

रहता है। वही आँतरिक कोर्ट में दैव मार्ग में गुनाह करनेवाले के लिए सुनाया गया शिक्ष(सजा) कई जन्म होते हैं श्लोक के भाव में ही ज्ञात हो रहा है। कितने जन्मों की शिक्ष(सजा) या कितनी अवधि की शिक्ष(सजा) होगी देखें तो उसका एक आधार मिला। एक मूल ग्रन्थ में इस प्रकार कहा गया। मनुष्यों द्वारा किए गए हर पाप, दूषण को क्षमा मिल सकती है, लेकिन आत्मविषय में दूषण के लिए कोई पाप क्षमा नहीं है। मनुष्यों के विरुद्ध में बातें करने वालों को पाप क्षमा मिल सकती है, परन्तु परमात्मा के विरुद्ध बातें कहने वालों को इस युग में, तथा आनेवाले युग में भी क्षमा नहीं मिल सकती।

प्रपंच विषयों में हो, या प्रपंच मनुष्यों के विषयों में हो पाप करने से, उन पापों को ज्ञान द्वारा भस्म कर सकते हैं। प्रपंच संबंधित पापों को करनेवाला भी ज्ञानी बन सकता है। दैवज्ञान की जानकारी कर ज्ञानी में परिवर्तित होकर कितना भी दुष्ट प्रवृति का क्यों न हो, कितना भी पापी क्यों न हो उसका पाप ज्ञानाग्नि से भस्म हो सकता है। वैसे प्रवृति का व्यक्ति बहुत ही कम अवधि में पापमुक्त हो जाता है। वैसे दुष्ट प्रवृति के व्यक्ति को मेरे हिसाब में सत पुरुष कहा जाना चाहिए। इसी विषय में गीता में राजविद्या राजगुह्य अध्याय में 30 वाँ श्लोक में कहा गया है।

30 वाँ श्लोक अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।
साधुरेव स मन्तव्य; सम्यग्व्यवसितो हि स; ।।

भावार्थ :- "इस प्रपंच में यदि कोई सुदुराचारी अर्थात् अतिशय बुरे आचरणवाला मनुष्य भी अन्य चिन्तन से मुक्त हुआ मुझ(परमेश्वर) की आराधना करता है तो उसे साधु ही समझना चाहिए। क्योंकि वह निश्चय ज्ञान का जानकार हो गया है।"

प्रपंच संबंधित पापों को करनेवाला अपने पापों को दैवज्ञान द्वारा समाप्त कर सकता है, उसे सतपुरुष कहा जाएगा। परन्तु दैव संबंधित

गुनाह करनेवाला के लिए ज्ञान जानने की गुंजाइश नहीं रहती, उसे ज्ञान से दूर कर दिया जाता है परमात्मा ने कहा। प्रपंच संबंधित विषयों में पाप पानेवाला पाप क्षमा पा सकता है। दैवसंबंधित विषयों में अधर्म वर्ताव करनेवाले के लिए ऐसी कोई गुंजाइश नहीं रहती है। परमेश्वर द्वारा निर्णय निर्णीत व्यक्ति ज्ञान नहीं पा सकेगा, कहा। यह विधान एक हिन्दूओं के लिए ही नहीं बल्कि अन्य सभी समाजों के लोगों के लिए एक ही प्रकार से लागू होता है। हिन्दू समाज में रहते हुए हम हिन्दू हैं कहनेवालों में अनेक लोगों को उनका ग्रन्थ कौन सा है, नहीं जानते हैं। हलांकि अन्य समाजों अर्थात् मुस्लिमों, ईसाईयों को उनका ग्रन्थ उन्हें अच्छे से मालूम है। मुस्लिमों दैवज्ञान हेतु क़ुरआन ग्रन्थ, ईसाईयों बाइबल ग्रन्थ के बारें में जानते हैं, तथा बाइबल के आगे पवित्र शब्द रखकर पवित्र बाइबल , क़ुरआन के आगे पवित्र शब्द रखकर पवित्र क़ुरआन गौरवपूर्वक कहते हैं। हिन्दूओं के भगवद् गीता के आगे वैसा कोई गौरव शब्द नहीं रखा गया। लेकिन अब हम, और हमारे अनुचर भगवद् गीता के आगे परम पवित्र शब्द जोड़कर, परम पवित्र भगवद् गीता कह रहे हैं। आगे गौरवपूर्वक शब्दों को देखने वाले भगवद् गीता को बिना पढ़े ही ग्रन्थ के बारें में जान सकेंगें। ग्रन्थ के आगे गौरवप्रद नामों के होते हुए भी, ग्रन्थों दैवज्ञान से युक्त होते हुए भी, एक तरफ ईसाईयों तथा दूसरी तरफ मुस्लिमों ने अपने-अपने ग्रन्थों से उन्हें जितना जानना था उतना उन्होंने जान नहीं, कह सकते हैं।

इन्दूओं(हिन्दूओं) का ग्रन्थ भगवद् गीता हिन्दूओं के पास होते हुए भी, कुछ लोगों ने उसे श्रद्धापूर्वक पढ़ा भी, किन्तु ज्ञान समझ नहीं सकें। ज्ञान उनकी समझ में न सका, किन्तु अनेक संशय पैदा हो गए। विश्वरुप दर्शनं योग में यज्ञों को करना अधर्म है, उसके कारण ईश्वर को नहीं जाना जा सकता है, कहा गया। उसी यज्ञों के बारें में कर्मयोग अध्याय में 10 से 16 श्लोकों तक यज्ञों को करना चाहिए कहा गया। यज्ञ

करना मनुष्य का कर्तव्य है, यज्ञ न करना चोरी करने के बराबर है 12 वाँ श्लोक में दिया गया है। परमात्मा ने विश्वरुप दर्शनं में वेदों, यज्ञों, तपों को अधर्म कहा गया और कर्मयोग में यज्ञों को अवश्य करना चाहिए क्यों कहा गया। परस्पर विरुद्ध बातों हैं, किस पर विश्वास करें संशय आ सकता है। इस प्रकार के शंकाओं में पड़कर अनेक लोगों को गीता से कुछ भी जानकारी न हो सकी। भगवद् गीता को पढ़ने के बाद भी ज्ञान की जानकारी न हो सकी, अनेक शंकाएँ उत्पन्न हुए। पाँच हजार वर्ष पूर्व जन्मी भगवद् गीता में इस प्रकार की त्रुटियाँ रहना एक इन्दू(हिन्दू) होने के नाते मैं सहमत हूँ। और इस प्रकार की त्रुटियाँ गीता में नजर न आ सके भगवद् गीता के रुप में "**त्रैत सिद्धान्त भगवद् गीता**" दुनिया के सामने लाया गया। परमात्मा सेवा में एक हिस्सा समझकर इस कार्य को किया।

भगवद् गीता में भी मनुष्यों को दूसरे रास्ते भटकाने में, परमात्मा की ओर जाने से रोकने के लिए माया ने, कहीं-कहीं शंकाएँ उत्पन्न करने हेतु अपने ज्ञान को गीता में रख छोड़ा। स्मरण में रखना चाहिए कि ईश्वर की जानकारी के बिना कुछ भी नहीं होता है। भगवद् गीता में माया ने (शैतान ने) एक प्रकार से प्रभाव दिखाया, बाइबल ग्रन्थ में दूसरे प्रकार से प्रभाव दिखाया। बाइबल ग्रन्थ में शैतान का क्या प्रभाव है कोई नहीं जानता। गीता में माया का क्या प्रभाव है अबतक हिन्दू भी नहीं जानते हैं। सबसे पहले हमने ही बताया कि यह मायाज्ञान है। इसी प्रकार से बाइबल में भी मनुष्य को परमेश्वर मार्ग से कैसे भटकाया जाय, उस प्रकार की व्यवस्था शैतान ने दूसरे तरह से कर रखा। उस शैतान का प्रयत्न भले ही हम बाहर न कह पायें, लेकिन एक विषय में हम शुरु से ही कह रहे हैं। बाइबल 66 भागों में हैं। उसमें ईसा मसीह जब जीवित थे उनके कहें वाक्य मत्ती, मार्क, लूका, तथा योहना ये चार भाग हैं। हम कह रहे हैं इन चार सु-समाचारों को पढें अन्य 62 भागों की आपको आवश्यकता नहीं है।

हमने कहा था जिसके पास समझने की शक्ति है उसके लिए एक योहना सु-समाचार ही पर्याप्त है। फिर भी किसी ने भी हमारे बातों की परवाह नहीं की, जैसे कि भैंस के आगे बिन बजाए। और कहा गया हमारे ईसाईयों के ग्रन्थ के बारें में आप हिन्दू क्या जानेंगे। बाइबल में परमात्माज्ञान के अलावा, शैतान प्रभाव भी अप्रत्यक्ष है, और क़ुरआन ग्रन्थ में अलग ही प्रकार से है।

जो भी होता है परमात्मा की अनुमति से ही होता है। परमात्मा के जानकारी के बिना कुछ नहीं होता स्मरण में रखना चाहिए। मुस्लमानों को भी शैतान(माया) ने दूसरे रास्ते भटकाने के लिए प्रयत्न किया। इस्लाम में ही नहीं बल्कि अन्य मतों(धर्मों) में भी उनका प्रभाव है। मुस्लिमों को शैतान ने किस तरह से धोखा में रखा, अल्लाह के मार्ग में हो कहते हुए, किस तरह से दूसरे रास्ते में भटकाया, मैं जानता हूँ किन्तु मैं बाहर बताने के लिए तैयार नहीं हूँ। क्योंकि जो मैं जानता हूँ वह सत्य है या नहीं। इस वजह से यह मेरे तक ही रहेगी। फिर भी मुस्लिम समाज में रहनेवालों के लिए मेरा कहना यह है कि 112 वाँ सुरा में चार आयतों को अच्छी तरह से पढ़िए , समझिए। उस एक सुरा में ही अल्लाह का अर्थ क्या है, कितना ताकतवर है जान जायेंगे। और मुख्य रुप से कहना यह है कि इस्लाम में क़ुरआन ग्रन्थ से बढ़कर कुछ नहीं है। ऐसे में आपको हदीस क्यों ? क़ुरआन के साथ उसकी समानता किसी भी ग्रन्थ से मत कीजिए। आपको दैवमार्ग से भटकाने के लिए शैतान को अवसर मत दीजिए।

माया को परमात्मा ने सृष्टि के आदि में ही बनाया। परमात्मा की आज्ञा से ही माया कार्य कर रही है। परमात्मा शक्ति से कार्य कर रही माया बहुत बलशाली है। जिसे ईश्वर पर श्रद्धा नहीं होती ईश्वर की ओर जाने नहीं देती। जो ईश्वर में भक्ति नहीं रखता उसे ईश्वर की ओर जाने न देने के लिए माया पहरेदार बनकर, सभी मतों(धर्मों) में जिसे श्रद्धा नहीं होती

उसे दूर रखने के सारे व्यवस्था कर रखी। उसी प्रयत्न के अन्तर्गत आते हैं भगवद् गीता में सारे अधर्म श्लोक। शेष सभी मतों(धर्मों) में माया प्रयत्न नजर आता रहता है। हिन्दूओं का ग्रन्थ भगवद् गीता के अलावा वेदों, पुराणों में माया का प्रभाव अत्यधिक है। सभी मतो(धर्मों) के लोग समझते हैं कि वे सही मार्ग में चल रहे हैं किन्तु, उन्हें स्वयं को परखना चाहिए कि कहीं माया ने उन्हें भटकाया तो नहीं। जो सावधान रहते हैं उन्हें ही नहीं बख्शती माया, असावधान लोगों को बख्स देगी सोचना गलतफहमी होगी।

अबतक हिन्दूओं के बारें में तथा उनके अधर्म कार्यों के बारें में बातें कर रहे थें। परमात्मा ने केवल हिन्दूओं के बारें में ही नहीं कहा, बल्कि वे सर्व मानवों के अधिपति है, उनके बोध समस्त प्राणियों से संबंधित होने के कारण, उनका फैसला या निर्णय सभी पर एक जैसा लागू होता है। यह सब सत्य घोषणा करने के लिए था, न कि किसी को दुखी करने के लिए, पहले ही सूचित कर रहे हैं। अब ईसाईयों और मुस्लिमानों के बारें में बातें करते हैं, दोनों को ईश्वर ने एक ही ज्ञान बताया लेकिन इन दोनों मतों(धर्मों) में मरण के बारें में हो, पैदा होने के बारें में हो बहुत अभिप्राय भेद रहे हैं। मुस्लिम कहते हैं मनुष्य मरने के बाद न ही दोबारा पैदा होता है, न ही जीता है, ईसा मसीह मरकर दोबारा जीवित हुए हैं ईसाईयों का मानना हैं। हमारा क़ुरआन ज्ञान ही उत्कृष्ट है मुस्लिम कहते हैं, नहीं, हमारा बाइबल का ज्ञान ही उत्कृष्ट है ईसाईयों का कहना है। दोनों मतों(धर्मों) का ज्ञान एक होते हुए भी, ज्ञान अलग-अलग समझें और अभिप्राय भेद हों माया ने व्यवस्था कर रखी इसे दोनों मतों(धर्मों) के लोगों ने ग्रहण नहीं किया। दोनों आपस में एक ही ज्ञान को लेकर एक दूसरे की निन्दा करते हैं। परोक्ष रुप में देखें तो परमात्मा, तथा परमात्मा ज्ञान की ही आपस में निन्दा कर रहे हैं। उस वजह से परमात्मा के अदालत में दोनों दोषी होंगें, और शिक्ष(सजा) भी मिलेगी वे

समझ नहीं पा रहे हैं। कहीं भी कुछ भी बातें कह लें परवाह नहीं, परन्तु परमात्मा के विषय में बहुत सावधानी से बातें करने की आवश्यकता है, भूलना नहीं चाहिए।

मनुष्यों अलग-अलग मतों(धर्मों में विभाजित हो जाने पर भी ईश्वर की दृष्टि में सब बराबर हैं। कोई भी गलती करें हिन्दूओं के लिए, मुस्लिमों के लिए अलग-अलग शिक्ष(सजा) नहीं होती है। सब के लिए एक जैसा फैसला, एक जैसा शिक्ष(सजा) होती है। प्रपंच विषय में कोई गलती करे उसकी गलती मालूम पड़ती है, अगर वह परमात्मा विषय हो तो, गलती करनेवाले को सावधान करना सबका दायित्व है। इस वजह जहाँ तक मुझे मालूम है परमात्मा मार्ग में मनुष्य द्वारा की गई गलतियों के बारें में हम बातें कर रहे हैं। क़ुरआन ग्रन्थ में आलि इम्रान तीसरा सुरा, सातवाँ आयत में मुतषाबिहत वाक्य क़ुरआन ग्रन्थ में दिया गया, उस वाक्य का तात्पर्य उसका ठीक पहलू अल्लाह ही को मालूम है, कहा गया। इसका अर्थ यही हुआ कि किसी भी मनुष्य को उन वाक्यों में ज्ञान नहीं मालूम हो सकता। परमात्मा का विषय परमात्मा के अलावा अन्य को नहीं जान सकता, इसका मतलब यही हुआ कि मनुष्यों को परमात्मा के अलावा अन्य कोई नहीं बोध करवा सकता। कहीं भी कोई परमात्मा के धर्मों को यथाचित बोध कर रहा हो उन्हें मनुष्य नहीं कहा जायेगा। क्योंकि कोई मनुष्य परमात्मा के सूक्ष्मज्ञान को नहीं जानता परमात्मा ने अपने ग्रन्थ में कहा था। धरती पर मनुष्यों को ज्ञान सूचित करने हेतु कोई भी मनुष्य योग्य न हो तो, कोई भी मनुष्य परमात्मा ज्ञान न जानता हो तो, परमात्मा को ही आकर बताना पड़ता है। परमात्मा प्रत्यक्ष रुप में किसी से बातें नहीं करता क़ुरआन ग्रन्थ में 42 वाँ सुरा 51 आयत में कहा। ऐसे में परमात्मा प्रत्यक्ष में न आकर परोक्ष में भेश बदलकर आकर बातें करेगा। वे आकर बतायेंगे तो यथार्थ ज्ञान दुनिया जानेगी। तबतक जानने की गुंजाइश नहीं है। परमात्मा किसी भी तरीके से धरती पर अवतरित होंगे क़ुरआन ग्रन्थ

ही साक्ष्य है। सुरा 89, आयत 22 में रब का हुकुम आए और फ़रिश्ते क़तार क़तार (फ़रिश्ते कतार में होंगे अल्लाह अवतरित होंगे)। (23) उस दिन जहन्नुम लाई जाए, उस दिन आदमी सोचेगा और अब सोचने का वक्त कहाँ। (24) कहेगा हाय किसी तरह मैंने जीते जी नेकी(ज्ञान जानी होती) आगे भेजी होती।

इन तीनों वाक्यों को देखें तो परमात्मा आकर बतायेंगे तो यथार्थ ज्ञान दुनिया जानेगी, ज्ञान जानने के बाद लोगों को अहसास होगा कि उन्होंने कितना समय व्यर्थ जाने दिया ज्ञान पर श्रद्धा नहीं रखा। मेरा ज्ञान मेरे अलावा कोई जानता। जब मैं अवतरित होकर मनुष्यों को ज्ञान बतलाऊँ गा और मनुष्य ज्ञान जानकर पश्चाताप करेगा क़ुरआन ग्रन्थ में परमात्मा सूचित करने पर भी, परमात्मा कभी भी अवतरित नहीं होंगे कहना क्या परमात्मा के कहे हुए बात का विरुद्ध में जाना नहीं कहा जाएगा? जो लोग ऐसा कहते हैं, क्या वे शिक्ष(सजा) के हकदार नहीं हैं? 42 वाँ सुरा 51 वाँ आयत में अल्लाह प्रत्यक्ष बातें नहीं करेगा कहकर अपने ज्ञान को तीन प्रकार से मनुष्यों को सूचित किया, बताया गया। उनमें से तीसरा दूत द्वारा सूचित करेगा, कहा। वो दूत कौन है? क्या कोई मुस्लमान बता सकता है? राजा पुरुषोत्तम के पास चक्रवर्ती अलैगजेन्डर का दूत आया। पुरुषोत्तम बड़े धैर्यशाली थे। वे किसी के सामने झुकते नहीं थे। उनसे समयोचित समझ से बातें करना पड़ता था। ऐसे में एक साधारण दूत किसी भी प्रकार का निर्णय नहीं ले सकता। आवश्यकतानुसार बातें करना पड़ता था। इसलिए दूत के वेष में अलैगजेन्डर ही पुरुषोत्तम के पास आए। आनेवाले को सब ने दूत ही समझा, वास्तव में वे चक्रवर्ती ही थे। ठीक वैसे ही परमात्मा भेष बदलकर मनुष्य की तरह ही आकर अपना ज्ञान बोध करा जाएगा।

भगवद् गीता में राजविद्या राजगुह्य योग में 11 वाँ श्लोक में ऊ पर जो बताया गया उसका साक्ष्य देख सकते हैं।

11 वाँ अवजानन्ति मां मानुषीं तनुमाश्रितम् ।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम् ।।

भावार्थ :- "मैं सृष्टिकर्ता सब प्राणियों का ईश्वर हूँ, मैं परमेश्वर जब मानव शरीर धारण करता हूँ, मेरे दैवभाव(परमात्मातत्व) को न जानने के कारण मूढ लोग मेरा अनादर करते हैं।" इस भावार्थ में विषय को देखें तो कोई नहीं कह सकता कि परमात्मा शरीर धारणकर नहीं आएगा। भगवद् गीता में भी जब-जब धरती पर धर्म की हानि होगी, धर्मों को सूचित करने के लिए मैं आऊँगा, कहा। जब मैं आऊँगा कोई मुझको पहचान नहीं पाएगा, मनुष्य की तरह ही जीवन गुजारकर अंत में ज्ञान सूचित कर जाऊँ गा। और मुझको कोई पहचान नहीं पाएगा। वे फलाँ है कहने के बावजुद भी ईश्वर को न पहचान पाने की स्थिीति में है मनुष्य। इस कारण कोई नहीं जानता परमात्मा भगवान के भेष में मनुष्य रुप में आकर चले जायेंगे। भगवद् गीता में मेरे ज्ञान को सूचित करने के लिए आऊँगा, और मुझे कोई नहीं पहचान पाएगा और मुझे साधारण मनुष्य समझकर मेरा अनादर करेंगें भी कहा।

बाइबल ग्रन्थ में देखें तो युहन्ना 8 वाँ अध्याय में 23 वाँ वाक्य में तुम नीचे के हो, मैं ऊपर का हूँ(तुम संसार के हो, मैं संसार का नहीं हूँ) कहा गया। इस एक वाक्य से मालूम होता है कि मसीहा के रुप में कौन आया था। लेकिन माया ने बरगलाकर उनका परिचय साधारण मनुष्य की तरह ही करवाया। एक संदर्भ में (युहन्ना 8-19 वाँ वाक्य में) उन्होंने उससे कहा, "तेरा पिता कहाँ है?" यीशु ने उत्तर दिया, "न तुम मुझे जानते हो, न मेरे पिता को, यदि तुम मुझे जानते तो मेरे पिता को भी जानते।" इस 19 वाँ वाक्य में मैं, मेरे पिता अलग-अलग कहा और साथ

ही यीशु ने जो मुझे जानते मेरे पिता को भी जानेंगे कहा। इससे समझ सकते है कि जो आया था वह कौन होगा। फिर भी उन्हे कोई पहचान नहीं सकता। और एक जगह पर युहन्ना 8,24 वाक्य में) "मैंने तुम से कहा कि तुम अपने पापों से मरोगे, क्योंकि यदि तुम विश्वास न करोगे कि मैं वही हूँ तो अपने पापों से मरोगे।" इस वाक्य में पूर्णत; सुस्पष्ट किया गया। जो मनुष्य परमात्मा को, परमात्माज्ञान को जानेगा उसके पाप नष्ट होकर कर्ममुक्त हो जाएगा भगवद् गीता में कहा गया, मैं परमेश्वर हूँ तुम्हे यकीन न हो तो तुम्हारे पाप नष्ट नहीं होंगे कहा गया। दोनों बातों में समानता नजर आती है। परमात्मा ने कहीं नहीं कहा कि मैं परमात्मा के रुप में ही आऊँगा। मैं अपने धर्मों को बोध करने आऊँगा कहा। सब का ईश्वर मैं मानव शरीर धारण कर आया, अज्ञानियों ने मेरी महानता को न समझकर मेरा अनादर करते हैं भी कहा। कम ज्ञानी व्यक्ति के लिए परमात्मा आगमन को पहचानने की गुंजाइश रहती है, अगर वह परमात्मा अवतार नहीं लेते, अवतार लेनेवाला परमात्मा नहीं होगा कहे तो, वो परमात्मा के विपरीत बातें करना कहलाएगा न! परमात्मा के विपरीत बातें करने के कारण शिक्ष(सजा) का हकदार बनता है।

ईश्वर मत(धर्म), और मत(धर्म)व्यक्तियों में कोई भेद नहीं करता है। कोई भी उनके लिए अपराधी ही होगा। परमात्मा धरती पर जब मनुष्यों के मध्य आए थे किसी ने उन्हे पहचाना नहीं। अपने ही जैसा मनुष्य को परमात्मा मानना, मनुष्य के लिए सुलभ नहीं होता, क्योंकि अनेक शंकाएँ उत्पन्न होती हैं। उस समय मनुष्य ने विश्वास नहीं किया। उनका आना और ज्ञान सूचितकर चले जाना, उसके बाद भी उन्हे न पहचान पाना अज्ञानता ही कहलाएगा न! क्या वैसे लोगों पर फैसला नहीं होना चाहिए? क्या उन्हें शिक्ष(सजा) नहीं मिलनी चाहिए? हमनें अबतक सच्चा ज्ञान ही बताया सोचनेवाले एकबार पीछे मुड़कर देखें। आपने सही किया है, या गलत किया मालूम हो जाएगा। आप जाने अनजाने में भटक

गए हैं। आपने जो किया शत प्रतिशत गलत था। इसलिए अभी से मत(धर्म) के नशे से बाहर निकलकर तेरा ईश्वर कितना महान है जानने का प्रयत्न करें। इतना सब कुछ बताने के बाद भी ईश्वर ऊपर कहीं रहता है, वे मनुष्य रुप में नहीं आ सकता, जो सोचने है उसकी रक्षा कोई नहीं कर सकता।

ईसाई मत(धर्म) में ईसाईयों में ही ईसा मसीह के बारें में भिन्न-भिन्न अभिप्राय बने हुए हैं। जिन लोगों को ईसा पर ही सही अभिप्राय न रहा हो, उनके बताए बोधों पर एकाभिप्राय होगा यकीन नहीं हो रहा है। कुछलोग यीशु को पुत्र, परमेश्वर को पिता समझ रहे हैं। कुछलोग ईसा को परमेश्वर का पुत्र, कुछलोग ईसा को पिता कह रहे हैं। बाइबल में, स्वयं ईसा ने कहा था उन्हे परमेश्वर ने भेजा। इसी कारण कुछलोग परमेश्वर को पिता, ईसा को पुत्र कहा जाता रहा है। परमेश्वर सबके पिता होने के कारण लोग भी परमेश्वर को पिता मान, उस हिसाब के अनुसार परमेश्वर के पुत्र के रुप में ईसा को सहोदर मानकर, ईसाईयों में जो खुद को ज्ञानी कहते हैं मसीहा हमारा सहोदर कहते हैं। हमसे पहले पैदा हुए इसलिए हमारे सहोदर होंगे कहते हैं। इसी नेपथ्य में हमारे सहोदर यीशु ने इस प्रकार से कहा था उनके वाक्यों को बतला रहे हैं। जब आवश्यकता पड़ती है परमात्मा मनुष्य के रुप में आकर अपने ज्ञान को सूचितकर जाऊँ गा अनेकों बार कहा, उन्हे जब आवश्यकता पड़ेगी एक-एक बार एक-एक रुप में, एक-एक बार एक-एक नाम से, एक-एक बार एक-एक विधान से आकर दुनिया में मनुष्य नहीं बल्कि मनुष्य के जैसे नाटककर अंत में ज्ञान सूचितकर गए। वे जितने बार भी आए थे, जितने भी नाम बताए गए, उन्हे किसी ने ग्रहण नहीं किया। उनका आगमन केवल ज्ञान सूचित करने हेतु था, उनका आकार हो, या नाम हो और उनकी बातें हो तुम्हें माया में डालने के लिए था, वास्तव में वे ही पिता हैं, वे ही पुत्र हैं। मैं फलाँ हूँ कहकर कई जगहों पर कहा, फिर भी मनुष्य के पास उन्हे पहचानने का

ज्ञान न होने के कारण कई जगहों पर मैं अलग परमेश्वर अलग कहा। और साथ ही मैं पुत्र, मेरा पिता परमेश्वर कहा। उस कथन से अनेकलोग परमेश्वर अलग, यीशु अलग मान रहे हैं। ईसा मसीह के बातों में एकबार वे ही परमेश्वर कहकर अगले ही पल परमेश्वर अलग हैं। वास्तव में उन्होंने कई जगहों पर अपने आप ही मैं परमेश्वर कह कर सूचना दी परन्तु अंन्धी दुनिया उन्हें पहचान न सकी।

उन्हें न पहचानें कोई परवाह नहीं, किन्तु एक वर्गवाले अपने को ज्ञानी कहकर ईसा को सहोदर कहना बड़ी विचित्र बात लगती है। मैं सर्वदा हूँ परमेश्वर ने कहा, क्या अन्य किसी में धैर्यपूर्वक कहने की हिम्मत है? कोई भी न कह पानेवाले वाक्यों को ईसा कहते हैं यूहन्ना सुसमाचार 8 वाँ अध्याय 57, 58 वाक्यों में कहा गया। (57) उससे कहा, अब तक यू पचास वर्ष का नहीं, फिर भी तु ने अब्राहम को देखा है? (58) मैं तुम से सच सच कहता हूँ, कि पहले इसके कि अब्राहम उत्पन्न हुआ, मैं हूँ। आपने देखा न! कोई भी सामान्य व्यक्ति ऐसा कह पाएगा? द्वापरयुग में श्रीकृष्ण से अर्जुन ने यही कहा था। " तू अभी पैदा हुए हो! सूर्य सृष्टि के आदि से ही है न! तब तूने उन्हे कैसे ज्ञान बताया?" अर्जुन ने प्रश्न पुछा। उत्तर में श्रीकृष्ण ने, "मैं तब भी था अब भी हूँ, मुझे सब स्मरण है" कहा था। इन सब बातों को संग्रह कर ज्ञान दृष्टि से देखें तो, परमात्माज्ञान परमात्मा ही जानते है दूसरा कोई नहीं जान सकता। इसलिए जब जब ज्ञान धरती पर न होगा(हानि पहुँचेगी), परमात्मा मनुष्य के भेष में आकर अपने ज्ञान को बता जायेंगे, सूचित सो रहा है। परमात्मा ने मैं आप के मध्य में जब जब धर्मों को हानि पहुँचेगी आकर धर्म की स्थापना कर जाऊँ गा गीता में कहा, बाइबल मे कहा गया। परमात्मा ने इस प्रकार से कहने के बावजुद भी ! परमात्मा अवतरित नहीं होंगे परमात्मा के बातों के विपरीत बातें करने वाले, परमात्मा मनुष्य के रुप में आने पर भी उन्हे न

पहचान कर अनादर करनेवालों को, ईश्वर की अदालत में प्रकृति अपराधी के रुप में खड़ा कर सकती है। परमात्मा मनुष्य जैसा(भगवान के रुप में) सामने रहकर बातें कर रहे हो उन पर ध्यान न देना उनके बातों को अनसुना करना, परमात्मा मनुष्य की तरह नहीं आयेंगे जो लोग कहते हैं,वे परमात्मा के फैसले और सजा(शिक्ष) के हकदार होंगे।

किसी से भी बचा जा सकता है परन्तु, ईश्वर के फैसले से बचना किसी के वश में नहीं है। मैंने अनजाने में बातें कही, हमारे गुरु या बोधक के बातों में आकर उस प्रकार से बातें कही , इसमें मेरी कोई गलती नहीं कहने पर भी, नशे का सेवनकर यादरहित स्थिीति में बातें कही, तुम कुछ भी कह लो तुम्हारी बातें सुननेवाला कोई नहीं होगा। फैसला होकर रहेगा, शिक्ष(सजा) अमल भी होगा। और तब तुम ज्ञान जानना चाहोगे भी तो तुझे मिलेगा नहीं। कितनी भी कोशिश कर लो ज्ञान का छोर न पा सकोगे। इसलिए अभी से ही परमात्मा, और परमात्माज्ञान का विधेय बनकर रहें।

समाप्त

*****

आपका

आचार्य प्रबोधानन्द योगिश्वर

*****

असत्य को हजार लोग कहें वह सत्य नहीं होगा,
सत्य को हजार लोग नकारें वो असत्य नहीं होगा।